ओंभः ओंसहः

वैश्य धर्म्म वा मानव धर्म्म

या

वैश्य जाति और सर्व साधारण मनुष्यों के कर्तव्य के विषय में देहरादून निवासी राजकुमार मोहन लाल उपनाम बलदेव सिंह की राय।

अर्थात्

बीसवीं (सन् १९१२ की) वैश्य कानफरेन्स कलकत्ता के सभापति (बलदेव सिंह) का ऐड्रेस या व्याख्यान।

गढ़वाली प्रेस देहरा दून में पण्डित विश्वम्भर दत्त चन्दोला द्वारा मुद्रित।

१९१३ [२००० प्रति

पंडित वैद्य मशालची-तीनों चतुर कहायें।
औरों को दें चांदना-आप अंधेरे जायें॥

आत्मात्वं गिरिजा पति सहचरा-प्राणाः शरीरम् गृहम् पूजाते विषयोप भोग रचना निन्द्रा समाधिस्थिती।
संचारा पदयोः प्रदक्षिण विधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो। यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलम्--शम्भो तवाराधनम् ॥ १ ॥

पोथी पढ़ २ जग मुवा-पंडित भया न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम के-पढ़े सो पंडित होय ॥

ओं भूः ओं भुवः

बीसवीं (सन १९१२) वैश्य कान्फ्रेंस

के

सभापति (बल्देव सिंह) का ऐड्रेस

वा

व्याख्यान

सन् १९१३

आत्मात्वं गिरिजा मति सहचरा-प्राणाः शरीरम् गृहम् पूजाते विषयोप भोग रचना निन्द्रा समाधिस्थिती ।
संचारा पदयोः प्रदक्षिण विधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो । यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलम्-शम्भो तवाराधनम् ॥ १ ॥

न मंत्रम् नो यंत्रम् तदपि नच जाने स्तुति महो, नचाह्वानं ध्यानं तदपि न च जाने स्तुति कथा ।
न जाने मुद्रास्ते तदपि नच जाने विलपनम्, परं जाने मातस्त्वदनु सरणं क्लेश हरणम् ॥१॥

पंडित वैद्य मशालची-तीनों चतुर कहायें ।
औरों को दें चांदना-आप अंधेरे जायें ॥

ओं भूः ओं महः

भूमिका व विज्ञापन

५००) पांच सौ रुपया भेंट

मैं यह भली भांति जानता हूं कि इस ऐड्रेस में कई त्रुटियां और दोष है। प्रथम तो यह इतना बड़ा और लम्बा है कि जितना ऐसे ऐड्रेस को होना नहीं चाहिये दूसरे इसकी भाषा भी ललित और मनोहर नहीं है। तीसरे इस में पुनरुक्ति दोष भी बहुत कुछ है। और भाषा आदि के विचार से यह लेख किसी गणना के योग्य नहीं है। परन्तु मैं पूर्ण नम्रता और साथ ही पूर्ण बल के साथ यह निवेदन अवश्य करता हूं कि इस ऐड्रेस में जिन सिद्धान्तों और क्रियाओं का वर्णन है उनके विचार से यह इस योग्य है कि इस के पढ़ने में समय व्यतीत करना व्यर्थ नहीं समझा जा सकेगा।

मेरा यह भी निवेदन है कि बहुत थोड़े विचार से प्रतीत हो जावेगा कि इस ऐड्रेस का सम्बन्ध केवल वैश्यों ही से नहीं किन्तु मनुष्य मात्र से है। यह भय मेरे अन्दर अवश्य उत्पन्न होता है कि "छोटे मुंह बड़ी बात" का दोष मुझ पर लगाया जावेगा। परन्तु मैं अपना यह निश्चय प्रकट करे बिना नहीं रह सकता हूं कि प्रत्येक मनुष्य, चाहे उसका मत आस्तिक, नास्तिक, जैन, बौद्ध, हिन्दू, सनातन धर्मी, आर्य्य-

समाजी, ब्रह्म समाजी, ईसाई, मुसलमान, कुछ भी हो। और उसके जीवन का लक्ष चाहे जो हो। उन अति सुगम क्रियाओं को करने से जिन का इशारा इस लेख में किया गया है अपने असली मनोरथों की सिद्धि बड़ी सुगमता से प्राप्त कर सकता है। बाल्यावस्था से लेकर वृद्धावस्था और मरण पर्यन्त, ब्रह्मचारी, विद्यार्थी, अध्यापक, प्रचारक, उपदेशक, गृहस्थी, हर प्रकार के दुनियादार, राजा, प्रजा, राज्याधिकारी, पुलिस, फौज आदि, स्वामी, सेवक, पुरुष, स्त्री, पोलिटिकल लोग, हर प्रकार के दुःखी, सुखी, मूर्ख, विद्वान, पापी, धर्मात्मा, अमीर, गरीब, सब प्रकार के लोग, बहुत साधारण प्रकार की समझ रखने वाले भी, अपने जीवन के एक २ पल को संसार भर में बड़ी सफलता का लाने वाला समझने के महा आनन्द को लाभ कर सकते हैं और वैश्य लोग और अन्य गृहस्थी दुनियादार लोग अपने कर्तव्यों के पालन और मनोरथों की सिद्धि में अमूल्य सहायता पा सकते हैं यदि वे उन अति सुगम और परम हर्ष दायनी क्रियाओं को काम में लायें कि जिनके विषय में मैं कहा करता हूं कि समझने और वर्ताव में लाने के लिये उनसे सुगम और कोई बात हो ही नहीं सकती है और जिनका वर्णन इस लेख में है। यह सच है कि जैसाकि एक (Graduate) बी० ए० पास महाशय इन क्रियाओं का वर्णन मुझ से सुनकर बड़े हर्ष के साथ चिल्ला उठे थे कि "Hallo ! the problem of life is solved" अर्थात "जीवन का उद्देश्य तो सिद्ध हो गया है वा

जीवन का मसला हल होगया है" वास्तव में उस परमेश्वर, परम प्रेमी जगत पिता ने अपनी सन्तान के परम मंगल के लिये अति सुगम उपाय नियत किये हैं उसकी जय हो! जय हो!

मैं जानता हूं कि मेरे ऊपर के कथन पर कहीं २ बड़े हास्य उड़ाये जायेंगे और बड़ी २ कटाक्ष की बातें कही जायेंगी। परन्तु ऐसा सदैव से होता आया है और मुझ को इस की कुछ भी परवा नहीं मुझ को जो मेरा धर्म और कर्तव्य प्रतीत होता है उसको मैं शान्ति के साथ करता रहना चाहता हूं। उस में किसी के हास्य आदि के भय से कमी करना मैं महा पाप समझता हूं।

साथ ही बहुत शुद्ध भाव और पवित्र मन से मैं यह निवेदन करता हूं, कि मैं बड़ी प्रसन्नता से पांच सौ ५००) रुपया, परम कृतज्ञता में भर कर, उस महाशय के चरणों में भेंट करूंगा कि जो ता० २४ जून सन १९१४ तक मेरे पास सब से अच्छी ऐसी क्रियाओं को लिख कर भेजे कि जो समझने और बर्ताव में लाने में उन क्रियाओं और सिद्धान्तों और उन के सार की अपेक्षा अधिक सुगम और हर्ष जनक हों और जिन के फल और परिणाम ऐसे ही या उन से अधिक उत्तम हों कि जिनका इस ऐड्रेस में वर्णन है। परन्तु इस बात का फैसला मेरे ही हाथ में होगा कि कौन सा लेख-यदि कोई है-इस भेंट का अधिकारी है।

मैं यह भी निवेदन करना चाहताहूं कि कारण वशात इस ऐड्रेस के छपने में देर हुइ, और अब भी जल्दी में इस

T

समय केवल २००० प्रति इसकी छपवाई जाती हैं परन्तु शीघ्र ही मैं इस को दूसरी बार कुछ बदल कर छपवाऊँगा और अपने मित्रों आदि की सेवा में एक २ प्रति भेजूंगा। जिन महाशयों के पास न पहुंचे और वे इस के पढ़ने की इच्छा रखते हों तो वे कृपा करके मुझ को सूचना दें और अपने पत्र द्वारा मुझ को निश्चय करावें कि वे उसको कमसे कम एक बार शान्ति के साथ अवश्य पढ़ेंगे। जिन को मैं पात्र समझुंगा उन की सेवा में उक्त प्रकार की सूचना आने पर, छपने के पश्चात, यथा शक्ति, बड़े हर्ष पूर्वक उपस्थित करूंगा, परन्तु पुस्तक बैरंग भेजी जायेंगी।

इस ऐड्रेस को उर्दू और अंग्रेजी में भी छपवाने का मेरा संकल्प है।

सारे संसार का सेवक

मोहिनी भवन
देहरा दून।

राजकुमार मोहनबल
उपनाम-बलदेव सिंह

T

ओ३म् भूः

हरिः ओ३म्, तत्सत् ॥

श्रीगणेशायनमः ॥

पिताजी सब आप के भक्त बन जायें ।

वैश्य कानफ्रेंस कलकत्ते के सभापति का व्याख्यान या ऐड्रेस

श्लोक—तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ।
ताराबलं चन्द्र बलं तदेव ॥
विद्या बलं सर्व बलं तदेव ।
लक्ष्मी पते यमहियुगमं स्मरामि ॥१॥

अर्थ—वही लग्न है (अर्थात् दूसरा नहीं है) और वही शुभ दिन है (अर्थात् दूसरा नहीं है) वही तारा बल और चन्द्र बल है (अर्थात् दूसरा नहीं) और वही विद्या बल और सब प्रकार का बल है कि जब मैं लक्ष्मी पति भगवान् को दोनों हाथ जोड़कर स्मरण करता हूं ॥१॥

T

श्लोक—अपवित्रः पवित्रो वा
सर्वावस्थां गतोऽपिवा
यः स्मरेत पुण्डरी काक्षं
सबाह्याभ्यन्तरः शुचि ॥२॥

अर्थ—चाहे कोई अपवित्र हो चाहे पवित्र हो चाहे किसी वा सर्व अवस्था को प्राप्त होगया हो अर्थात् महान् से महान् खोटी दशा में पहुंच गया हो परन्तु यदि वह पुंडरी काक्ष का स्मरण करता है तो अन्दर और बाहर उसका शुद्ध हो जाता है ॥ २ ॥

श्लोक—यस्यस्मरण मात्रेण
जन्मसंसार बंधनात् ।
विमुच्यते नमस्तस्मै
विष्णवे प्रभु विष्णवे ॥ ३ ॥

अर्थ—जिसके स्मरण मात्र से जन्म संसार के बंधनों से मुक्ति मिल जाती है उस विष्णु भगवान को बारंबार नमस्कार है ॥ ३ ॥

वेदमंत्र—ओं त्वंहिनः पिता वसो
त्वं माता शतक्रतो ।
बभू विथ अथाते
सुम्न मी महे ॥ ४ ॥

अर्थ—हे सर्वान्तर्यामी सर्व व्यापक, हे सारे संसार के प्रबन्ध करने के लिये अनेकानेक कार्यों के करने वाले

T

आपही हमारे पिता हो और आपही हमारी माता हो इस लिये हम आप से सुख मांगते हैं ॥ ४ ॥

वेद मंत्र—सनः पितेव सुनवे
ऽग्ने सुपायनो भव ।
सचस्वानः स्वस्तये ॥५॥

अर्थ—हे अग्ने! जिस प्रकार पिता पुत्र को प्राप्त हो जाता है उसी प्रकार हमारे लिये आप प्राप्त होने योग्य हैं आप सुख सम्पादन के लिये हम को अपने साथ संबंध कीजिये ॥ ५ ॥ सम्बद्ध

वेद मंत्र—वेदाहमेतत पुरुषं महान्त
मादित्या वर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वा ऽति मृत्युमेति
नान्यः पन्था विद्यते ऽयनाय ॥६॥

अर्थ—मैं इस ज्ञानी पुरुष प्रत्यक्ष व्यापक महान् पुरुष को प्रकाश स्वरूप और अंधकार से परे जानता हूं उस परमात्मा को ऐसा जानकर ही मनुष्य मृत्यु को तर कर मुक्त हो जाता है और कोई मार्ग मुक्त को नहीं है ॥ ६ ॥

श्लोक—सर्व धर्मान् परित्यज्य
"मामेकम् शरणम् ब्रज ।"
"मदीयम् क्रोड़मा ब्रज"
अहंत्वा सर्व पापेभ्यो

मोक्ष यिष्या मि माशुचः

प्रसन्नो भव ॥७॥

अर्थ—सर्व धर्मों को छोड़ कर अर्थात् यदि धर्म कमाने में तू अपने आप को असमर्थ पाता है तो इस की कुछ परवाह न करके तू एक मात्र मेरी शरण में बल्कि मेरी गोद में आजा मैं तुझ को सब पापों से मोक्ष कर दूंगा अर्थात् धर्म कमाने वाला बनादूंगा तू घबरावे मत. प्रसन्न होजा ॥ ७ ॥

चार पदार्थ पुरुषहित, लिये खड़े अकुलात ।
ज्यूं सुत को भोजन लिये, करत चिरौरी मात ॥

विनय

धन्य हैं आप प्यारे पिता जी । इस से अधिक शांति के देने वाले वचन सुनने की हम क्या इच्छा कर सकते हैं कि जैसे इन ऊपर के वेद के और गीता आदि के वाक्यों में हैं । क्या एक उच्च अधिकार मनुष्य को आपकी ओर से प्राप्त है ! । कितनी बड़ी क़दर मनुष्य की आपकी दृष्टि में है । बहुत लोग किसी राजा आदि के साथ साधारण प्रकार का संबंध होने मात्र पर भी बड़ा आनंद मानते हैं और अपने आप को बड़ा समझते हैं । परन्तु हे राजों के राजा और महाराजाओं के महाराजा ! हम को यह अधिकार प्राप्त है और इस अधिकार को काम में लाने के लिये अपने अनन्त प्रेम के वश मानो आप हमारी चिरौरी करते हैं कि हम जब चाहें आप के चरणों में

T

अपने आपको पुत्रों के समान बैठा हुआ, आप के आशीर्वाद का हाथ अपने सिरों पर बड़े प्रेम और आनंद के साथ फिरता हुआ, और अपने आप को कल कल और अति उत्तम दशा को प्राप्त हुआ हुआ पाऊँ। यदि किसी अपवित्र स्त्री वा पुरुष का चिंतन वा स्मरण हम को तत्काल अपवित्र बना देता है यदि कोई खोटा संकल्प वा इच्छा हमको तत्काल अपवित्र बना देती है तो निश्चय प्यारे पिता जी! आप जो महान् पवित्र हैं आप का स्मरण, और जिस प्रकार की इच्छा को हम लेकर इस स्थान में एकत्र हुये हैं वह इच्छा, अवश्यमेव हम को परम पवित्र और आप के सम्पूर्ण आशीर्वाद के पात्र और अनेकानेक गुणों से संयुक्त ही नहीं किन्तु हम को महान् उत्तम गुणों के केन्द्र बना देती है-और जैसे किसी प्लेग आदि रोग के असर के नीचे आये हुए पुरुष आदि में से हानि कारक अणु निकल कर दूसरों के लिये हानि कारक ही नहीं किन्तु उन को हानिकारक बनाने वाले बना देते हैं उसी प्रकार हमारे अंदर से आप के आशीर्वाद के गुणों से संयुक्त अणु नहीं किन्तु किरणें और लहरें आदि निकल निकल कर सारे संसार में अति उत्तम प्रकार का परिवर्तन पैदा करती हुई संसार भर के, सब चराचर के प्रत्येक परमाणू तक को अपने जैसा केन्द्र बना देती हैं-इस समय जिस अभिप्राय वा संकल्प को लेकर हम आपके पुत्र इस स्थान में उपस्थित हुए हैं उस को आप जानते हैं। आप जानते हैं कि हम आज्ञाकारी पुत्रों के समान आपकी आज्ञा पालनार्थ इस कान्फ्रेंस में

T

एकत्र हुए हैं और इसके द्वारा हम न केवल वैश्य जाति वा हिन्दू जाति वा भारतवर्ष के राजा प्रजा की वा मनुष्य मात्र की, किन्तु अपने सारे वसुधा रूपी कुटुम्ब को, सारे संसार के चराचर की उन्नति अपनी इस कान्फ्रेंस का अभिष्ट रखते हैं। और कौनसा पिता है कि जो अपने बच्चों के हृदयों में ऐसे संकल्पों की स्थिति को जान कर अत्यंत प्रसन्नता को प्राप्त न होवे और उन को इन संकल्पों के पूरा करने के लिये प्रयत्न करते देख कर महा आनन्दित न होवे ? हम अपने आप को धन्य धन्य कहते हैं कि हम निस्संदेह इस समय आप के महा आनंद के कारण और आप के सम्पूर्ण आशीर्वाद के पात्र बने हुए हैं। आपके आशीर्वाद पर भरोसा रख कर हम को कोई भी संदेह अपने हृदयों में लाने की आवश्यकता नहीं रहती है कि हमारे परिश्रम अत्यंत और सम्पूर्ण-सफलता को प्राप्त करेंगे। हमारे मन चाहे प्रकार से नहीं तो किसी और प्रकार से सही-और अब नहीं तो शीघ्रही किसी भविष्यत काल में हमारी इच्छायें अवश्यमेव पूरी होंगी। आहा! पवित्र संकल्पों के कैसे महान् फल हैं! इन संकल्पों मात्र से हम आप के आशीर्वाद के पात्र अपने आपको समझने के योग्य बन जाते हैं! और कैसा आनन्द है आपके पित्र आशीर्वाद में विश्वास रखने में और कैसा आत्मिक मान्सिक शारीरिक आदि बल इस आनन्द से हमारे अन्दर आता है कि जो हम को हमारे कर्तव्यों के करने में महान् सहायता का कारण होता है! सत्य है विश्वास न करना

ही एक मात्र पाप है कि जो हमारे प्रयत्नों की सफलता में रुकावट का कारण समझा जाने के योग्य है।

ॐ शान्तिः। ३ ॥

व्यख्यान वा ऐड्रैस।

परम प्रियवर, परम मान्यवर, बुजुरगो, महाशयो, भाइयो, और बहिनो! ईश्वर परम पिता के बड़े सुयोग्य पुत्रो और पुत्रियो, ईश्वर के नंदनो और नन्दनियो! शब्द सर्वथा असमर्थ हैं उस कृतज्ञता के भाव को प्रकट करने में कि जो आप महाशयों की कृपा, ऐसी बड़ी क़दर, ऐसे सच्चे प्रेम, और आपके बड़े सनमान ने मेरे हृदय के अन्दर उत्पन्न किया है। यदि मैं यह कहूं कि मेरे शरीर का रोम रोम कृतज्ञता रूप हो रहा है तो इसमें किंचित मात्र भी संदेह नहीं होना चाहिये। विचार के कानों से आप यदि काम लें तो आप को मेरा रोम रोम आप के धन्य वाद के गीत गाता हुवा प्रतीत होगा।

साधारण दृष्टि से देखा जाये तो मेरा इस समय इस कानफ्रैंस के सभापति पद पर उपस्थित होना एक महा आश्चर्य जनक बात है। भला कहां देहरा दून जैसा भारत वर्ष के एक कोने में पहाड़ की तली में एक छोटा सा स्थान कि जहां का मैं निवासी हूं। फिर कहां मैं वास्तव में एक बहुत ही तुच्छ मनुष्य कि जो पूर्ण दृढ़ कारणों से निश्चय किये हुए है कि मुझ से अधिक मूढ़, खोटा, पापी मनुष्य कोई भी संसार भर

में नहीं है, कि जिसकी विद्या भी बहुत ही अल्प है। फिर कहां सारे भारत वर्ष का शिरोमणि, सब से बड़ा और प्रसिद्ध नगर कलकत्ता। और इस कलकत्ते के किसी छोटे मोटे जलसे में नहीं किन्तु आल इन्डिया वैश्य कानफ्रेंस में मैं सभापति बनाया जाऊं, यह आश्चर्य है! आश्चर्य है!

परन्तु वास्तव में धन्य है वह हमारा परम पिता परमात्मा कि जिस के नियम ऐसे सुन्दर और मङ्गल कारी हैं कि जिन के फल बड़े ही उत्तम और महान् हैं। और उन पर मुझ जैसे तुच्छ, पापी मनुष्य के लिये भी चलना अति सुगम है। और विचार किया जाये तो उसके कारण मेरा ऐसे उच्च पद पर उपस्थित पाया जाना तो कोई भी आश्चर्य नहीं। आश्चर्य समझे जाने योग्य है तो यह बात है कि मैं वर्तमान दशा से बहुत बहुत ऊंचा क्यों नहीं दिखाई देता।

जिन नियमोंका मैंने अभी ज़िक्र किया है उनको संक्षेप के साथ निवेदन करदेना शायद हमारी कान्फ्रेन्स की सफलता में सहायकारी हो।

प्रथम मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि मैं ईश्वर को एक पुरुष विशेष, एक व्यक्ति मानता हूं। मैं ईश्वर को Abstract नहीं किन्तु Concrete अर्थात गुण नहीं किन्तु गुण युक्त, एक पुरुष या Personal God मानताहूं। इसका कारण केवल यही नहीं है कि वेद, गीता आदिके वचन कि जो मैंने आदि में पढ़े हैं और अनेक प्रकार के ऐसे वचन

शास्त्रों में अनेक भरे पड़े हैं कि जिनसे ईश्वर का पुरुष होना बहुत स्पष्ट प्रकार से पाया जाता है। दृष्टान्त के लिये विचार कीजिये कि ईश्वर के विषय में पुरुष, माता, पिता, मित्र राजा आदि बचनों का प्रयोग किया गया है। ईश्वर से प्रार्थना करने की शिक्षा कि वह हमारी बुद्धियों को प्रेरणा करे—प्रेरणा तो पुरुष या व्यक्ति ही कर सकता है—और वेदों में बार २ इस शब्द का प्रयोग किया है कि हे मनुष्यो तुम यह करो वा वह करो। इन आज्ञाओं से स्पष्ट सिद्ध होता है कि वेदादि का ईश्वर पुरुष है। इसके अतिरिक्त भिन्न भक्तों आदि की साक्षी कि जो अपने अनुभव आदि के कारण ईश्वर को पुरुष मानते हैं। परन्तु सबसे बड़ा कारण जिससे मैं ईश्वर को ऐसा मानता हूं मेरा अपना अनुभव और मेरे दो चार दस बीस बार का नहीं, किन्तु अनेक बार के तजरुबे का फल है। और मेरी तो बुद्धि भी चाहे कितनी ही तुच्छ हो परन्तु वह इस के बिरुद्ध नहीं किन्तु पूर्णतया अनूकूल है। और मैं इस संबंध में जो कुछ निवेदन करुंगा वह सब वह बातें होंगी कि जिन का अनुभव और तजरुबा मुझ को आप की कृपा से नित्य होता रहता। पुस्तकों आदि मेंभी यह बातें हैं परन्तु मैं इसलिये नहीं कहता हूं कि मैंने यह बातें पढ़ीं या सुनीं हैं किन्तु इस लिये कि मैंने भुक्ती हैं।

मेरा निश्चय है कि ईश्वर सर्व व्यापक और परम पवित्र है। जिस के अन्दर कोई द्वेष या कोई अवगुण या बुराई नहीं। भलाई और गुण उस के अंदर अनंत हैं और

उसके प्रत्येक भलाई वा गुण अखंड और अनंत हैं। माता, पिता आदि के अन्दर उसी प्रेम रुपी सूर्य्य की मानो एक किरण होती है जिस के फल संसार में बड़े २ विचित्र दिखाई देते हैं। मेरे सिद्धान्त के अनुसार ईश्वर एक पुरुष है परन्तु अति उत्तम पुरुष वह हमारा पिता और माता है। संसारिक माता पिता में और उस में केवल इतना अन्तर है कि चाहे वास्तव में तो वे भी ईश्वर से भी बड़े समझे जाने योग्य हैं। विश्वासी भक्त ने कहा है।

राम ते अधिक राम कर दासा।
और उन ते अधिक राम कर पुत्राः ॥

परन्तु साधारण दृष्टि से देखा जाय तो माता पिता के अन्दर अनेक त्रुटियां और न्यूनतायें हैं, और ईश्वर के अन्दर न्यूनता नहीं किन्तु पूर्ण, सम्पूर्ण परिपूर्णता है। और मेरा जीवन इस बात का साक्षी है। जहां मैं एक ओर कहा करता हूं कि मुझ जैसा पापी और मूढ़ संसार भर में कोई नहीं है वहां मैं उसी सांस में पूरे बल के साथ यह भी कह दिया करता हूं कि मेरा जीवन एक पुस्तक है। इस मेरे जीवन रुपी पुस्तक में पढ़ लो कि ईश्वर परिपूर्ण है और वह हमारा पिता है, वह हमारी माता है, वह हमारे दुःख सुख में, हमारे गृहस्थ के कामों में साथी और सहायक है। वह दुःख विनाशक है, वह भव भय हरी है, वह पतित पावन है, वह शान्ति का भंडार है, वह सर्व सुख दायक है। उसी के भरोसे आदि पर मैं कहा करता हूं कि केवल मेरा ही नहीं किन्तु संसार भर में से

पाप भर गया है, दुःख भर गया है, और मौत भर गई है। वर्तमान पाप, दुःख और मौत मुझको संसार भर के आगामि पाप दुःख और मौत के नाश करने और सारे संसार में मङ्गल के लाने के उतने ही बड़े कारण वा साधक दीख पड़ते हैं कि जितने पुण्य और धर्म। और इस लिये इनकी स्थिति भी धन्यवाद के ही योग्य है और सोचनीय नहीं है। इस प्रकार के ईश्वर पर विश्वास रखने से क्या कुछ निश्चितपना, शांति और आनन्द, क्या कुछ अपनी शुभ कान्क्षाँस की सफलता और अपने सारे मनोरथों की सिद्धि के लिये विश्वास को हृदय में स्थान हो जाता है और क्या कुछ इस विश्वास का फल होता है इस को समझ लेना कोई कठिन बात नहीं है। ऐसा ईश्वर यदि वास्तविक है तब तो कोई कह ही क्या सकता है। परंतु कल्पित भी हो तो कल्पना करने वाले को किसी प्रकार कोई भी हानि पहुंचना संभव नहीं है। और न उस के आनन्द और उस आनन्द के फलों में कोई बाधा होसकती है। और इस लाभ से हमारे वह मित्र वीहीन रहते हैं कि जो ईश्वर को ही नहीं मान ते या जो ईश्वर को एक प्रकार की शक्ति वा गुण मात्र ही मानते हैं। और गुणवान वा पुरुष नहीं मानते। अपने ऐसे मित्रों से बड़े विनय भाव से मैं निवेदन करूंगा कि जैसे विशेष कर रोगादि के समय वैद्य लोगों की प्रेरणा पर चित्त को प्रसन्न करने वाली कल्पित कहानियें आदि का पढ़ना और सुनना भी उचित समझा जाया करता है। क्योंकि उस से स्वास्थ्यादि

T

को लाभ पहुंचता है। वैसे ही वे ईश्वर को मानने और उसको पुरुष विशेष वा Personal god समझने को ओर अपने चित्त को लगावें। क्योंकि इस से महान् और अत्यन्त लाभ की प्राप्ति की सम्भावना है। पश्चिम देश के किसी महा पुरुष ने कैसा अच्छा कहा है "If there is no God we better create one" कम से कम थोड़ी देर के लिये हम सब ही इस बात को मान लेवें और मान कर देखें क्या होता है कि एक ईश्वर है, कि जिस के अन्दर अवगुण एक भी नहीं हैं और गुण अनन्त हैं। और अपने प्रत्येक गुण में वह अनन्त है। किसी के पापों आदि के कारण वह उस से द्वेष भी नहीं रखता है। उसके गुणों में एक प्रेम का गुण है और इस में भी वह अनन्त है। और पिता माता आदि का प्रेम उसी प्रेमके सूर्य्य की मानो एक किरण है। या यों कहिये कि वह हमारा अनन्त दर्जेका प्रेमी पिता या माता है। पिता माता के संबंध में एक छोटी सीं प्रश्नोत्तरी कैसी सुन्दर किसी ने बनाई है कि जो मुझ को श्रीमान गोस्वामी मधु सुदन लाल जी ने बताई थी अर्थात्—"मिष्टं किम्—सुत बचनम्। मिष्ट तरम् किम्—तदेव सुत बचनम्,—पुनरपि मिष्ट तरम् किम् युक्तया प्रौढ़म् सुत बचनम्" जिस का अर्थ है कि संसार में मीठा या आनन्द का देने वाला पदार्थ क्या है? इस का उत्तर है कि बेटे या बेटी का वचन—फिर पूछा जाता है कि उससे अधिक मीठा या आनन्द का देनें वाला पदार्थ क्या है? इसका उत्तर है कि वही बेटे या बेटी का वचन

फिर पूछा जाता है कि फिर बताओ कि उस से भी अधिक मीठा और आनन्द का देने वाला पदार्थ क्या है? इसका उत्तर है कि युक्ति या बुद्धि या विचार से यह बात दृढ़ और निश्चय हो चुकि है कि बेटे या बेटी का बचन ही सबसे अधिक मीठा या आनन्द का देने वाला पदार्थ है। यदि इस प्रेम के सूर्य्य की एक किरण से माता पिता के लिये बच्चों के शब्द ऐसे हैं कि उन से अधिक आनन्द दायक और कोई पदार्थ हो ही नहीं सकता है तो जिस पिता का प्रेम अनन्त है उसके लिये उसके बच्चों के शब्द कितने आनद दायक होंगे, इस का अनुमान कौन कर सकता है? यहाँ एक और बात बिचार के योग्य है वह यह है कि सुपुत्र और सुपुत्री के शब्द तो माता पिता सदा ही सुनते हैं और उनका आनन्द लेते हैं परन्तु कहीं कुपुत्र या कुपुत्री यदि कुछ प्रेम के वचन माता पिता के कानों में डाल देवें तो फिर देखो उन के आनन्द की दशा को। पुत्र या पुत्री के शब्द के अर्थ नरक से त्राण करने वाले हैं, परन्तु इस बात पर बिचार करें तो वास्तव में बेटा या बेटी नरक से त्राण करने वाले नहीं किन्तु स्वर्ग से भी महा स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाले हैं। इसलिये बेटों और बेटियों को पुत्र और पुत्री कहना काफ़ी नहीं है। उनको नन्दन और नन्दनी अर्थात् आनन्द वर्द्धक के शब्द से पुकारना उचित है। इसी लिये मैंने आदि में आप के लिये इस शब्द का प्रयोग किया है-प्यारे भाइयो और प्यारी बहनो, बधाइयां तुम को और बधाइयां मुझ को कि हम अपने शब्द मात्र से ईश्वर के पुत्र और

पुत्री और नन्दन और नन्दनी बन जाते हैं। अच्छा अब आगे चलने से पहले आइये हम देर न करें। उस प्यारे पिता के कानों में अपना शब्द रूपी अमृत डाल देवें। वह इस समय यहां अपने सम्पूर्ण प्रेम और समस्त गुणों और महान् ऐश्वर्य के साथ विराजमान है। और उस प्रश्नोत्तरी के अनुसार मानो हमारे बोल २ का भूखा है। आइये उस की भूख मिटादें। अच्छा हो कि हम सब उस के आगे हाथ जोड़ें परन्तु यह याद रहे कि कोई मनुष्य किसी दास या सेवक या प्रजा आदि के हाथ जोड़ने से प्रसन्न नहीं होता है। किन्तु उसका पुत्र प्रेम और पुत्र भाव के साथ हाथ जोड़ता है। तब उसको प्रसन्नता होती है। इस लिये हम अपने आप को दास या सेवक आदि न समझें। किन्तु उसको प्रसन्न करने के लिये पुत्र भाव को मन में लाकर हाथ जोड़ें, साथ ही उसके यह भी है कि हम जो शब्द उसके कानों में डालें या उच्चारण करें तो केवल इस भाव के साथ कि हमारे शब्दों से वह प्रसन्न होता है इसी निष्काम भाव से जब कोई नन्दन या नन्दनी केवल पिता की प्रसन्नतार्थ उससे बात करता है तब उस पिता की पूर्ण प्रसन्नता होती है आईये हम अपने प्यारे पिता को पूरी प्रसन्नता का मज़ा चखावें, अच्छा लो अब जोड़िये हाथ और तीन बार कहिये "पिताजी सब आप के भक्त बन जायें-३" मैं इस समय अपने मन में यह फ़र्ज़ कर लेता हूं कि आप ने सब ने यह शब्द उच्चारण किये हैं। अब जरा हम याद करें कि हमने उक्त प्रकार का ईश्वर मान रक्खा है और यदि ऐसा हम उसको मानते

हैं तो ख़याल की दुनिया में हम अपने आप को एक बहुत ही बड़ी आश्चर्य दशा में इस समय पायेंगे कि जिस से अधिक आनन्ददायक और लाभदायक और ऊंची दशा का ख़याल करना भी शायद असंभव हो। लोग बहुत प्रसन्न हुआ करते हैं यदि लाट साहिब या लाट से भी बड़ी पदवी वालों से उन की बात चीत हो जावे। परन्तु इस समय हमने एक बहुत बड़े लाटों के लाट और सम्राटों के सम्राट के साथ बात की है। और हम किई अधिकार प्राप्त हैं कि जब चाहें तब, यहां तक कि अपने बिस्तर पर पड़े २ भी उस से बात कर लेवें। ओह! मनुष्य जाति तेरी सौभाग्यता, ओह! परमात्मन् तेरे सुन्दर नियम! बधाईयां प्यारे भाईयो और प्यारी बहनो तुम को और बधाईयो मुझ को!

अब हम थोड़ा इस बात को बिचारें कि जैसा कि गोस्वामी जी वाली प्रश्नोत्तरी से प्रकट है, कौनसा पिता है कि जो बच्चों के शब्दों को सुनकर, और फिर इस प्रकार के वचनों को सुनकर और उनके हृदयों में एक सुन्दर भाव का होना जान कर महा आनंद को प्राप्त न हो? और जो अनन्त प्रेमी पिता है वह तो जितना कुछ प्रसन्न हमारे इन शब्दों से हुआ है और जितना कुछ प्रसन्न हम उसको सदैव काल ऐसी सुगमता के साथ कर सकते हैं उसका अनुमान कौन कर सकता है? प्यारे भाईयो क्या इस प्रकार ईश्वर को इतना प्रसन्न कर लेना कोई छोटी बात है? लोगों ने राज पाट, धन, दौलत, अपने पराये और सब प्रकार के आराम

को छोड़ २ कर जंगलों में रहकर कैसे २ कष्ट उठाये हैं केवल इस लिये कि ईश्वर की प्रसन्नता को प्राप्त कर सकें इस से स्पष्ट है कि राज्य आदि की अपेक्षा ईश्वर की प्रसन्नता अधिक मानने योग्य है। और हम को इस समय राज्य आदि से अधिक पदार्थ की प्राप्ति हुई है और सदैव बड़ी सुगमता से होती रह सकती है ओह ! मनुष्य जाति तेरी सौभाग्यता। ओह ! परमात्मन् तेरे सुन्दर नियम बधाइयां प्यारे भाईयो और प्यारी बहनो तुमको और बधाईयां मुझ को।

साथ ही हम इस पर भी ध्यान देवें कि जबकि वह ऐसा प्रेमी पिता है और हम से वह प्रसन्न भी इतना है तो क्या वह हमारी इस प्रकार की इच्छा को भी पूर्ण नहीं करेगा कि जैसी उन शब्दों से प्रकट होती है जो आपने अभी उच्चारण किये हैं अर्थात् "पिता जी सब आप के भक्त बन जांये" ? जितनी उसकी शक्तियां आदि हैं अवश्यमेव और निश्चय हमारी इस इच्छा को पूरा करने में काम में आवेंगी। उसकी शक्तियां अनंत हैं इसलिये हम को अपनी इच्छाओं की पूर्ती में कोई संदेह नहीं हो सकता ! और हम मानो सारे संसार को भक्त बनाने वाले बन गये हैं। क्या यह कोई छोटे पुण्य की बात है ? प्रियवर मित्र गण आज तक जो कुछ भी हमने पाप किये हैं और उन का फल हमको जो कुछ भी भोगना पड़े परन्तु इतना बड़ा पुण्य भी तो कि जो बादशाहतों के दान से कहीं बढ़कर है अपने फल पैदा करेगा। बड़े २ दानी लोग अपने गुमाश्तों या ख़ज़ाञ्चियों को केवल

हुक्म दे देते हैं तो बड़े २ पुण्य के काम उनके हुक्म या ज़बान् हिलाने से होजाते हैं। ओह! हमारी ज़बान् हिलाने से कितना बड़ा पुन्य का काम होजाता है! और इस पुण्य का सुख जो आगे को हम को होवेगा उसका अनुमान कौन कर सक्ता है। सुख का ख्याल हम को करना नहीं चाहिये हमको केवल इस बात से प्रसन्न होना चाहिये कि हम अपने प्यारे पिता की ऐसी प्रसन्नता के और अपने संसार रूपी परिवार की ऐसी बड़ी सेवा के कारण बन रहे हैं। और कितनी सुगमता से हम इस बात को प्राप्त कर सकते हैं। कितनी सुगमता से एक रंक और महा पापी भी कितना बड़ा दानी बन सकता है! ओह! मनुष्य जाति तेरी सौभाग्यता! ओह! परमात्मन् तेरे सुन्दर नियम! बधाईयां प्यारे भाईयो और प्यारी बहनों तुम को और बधाईयां मुझ को!

इधर एक और बात विचारिये! जिस समय किसी के मन में किसी अपवित्र स्त्री वा पुरुष के नाम का चिन्तन वा स्मरण होता है उसी समय वह अपवित्र होजाता है बाहर से चाहे वह बदला हुआ नहीं दीख पड़ता, परन्तु असल में वह बदल गया है। यह निश्चय है इसको विचार कर यह सुगमता से समझ में आजाता है कि यदि एक अपवित्र पुरुष वा स्त्री के नाम का चिन्तन वा स्मरण हमको तत्काल अपवित्र बना देता है तो परम पवित्रता के भण्डार परमात्मा के नाम का चिन्तन वा स्मरण चाहे यह परमात्मा कल्पित ही क्यों न हो हम को तत्काल पवित्र बना देता है। कम से कम इस

समय हमने किसी खोटे मनुष्य का स्मरण नहीं किया है कि जो हम अपवित्र हो जाते। हमने ईश्वर का स्मरण किया है और हम पवित्र और परम पवित्र हो गये। बाहर से चाहे हम वैसे ही दीख पड़ते हैं। परन्तु वास्तव में हमारे अन्दर बड़ा परिवर्तन हो गया है। जैसा कि मक्नातीसी असर वाला लोहा रंग, रूप, सूरत, तोल, नाप आदि में वैसा ही होता है जैसा कि वह मक़्नातीसी असर आने से पहिले था परन्तु कौन कह सकता है कि वह असल में बदल नहीं गया? और जिस प्रकार किसी प्लेग वाले मनुष्य में से प्लेग का असर निकल कर दूसरों को, यहां तक कि जड़ पदार्थों को भी प्लेग फैलाने वाला बना देता है। चाहे वाह्य दृष्टि से यह प्लेग प्रतीत न होती हो परन्तु बुद्धि कहती है कि वह प्रवृत्त हो गई है। ऐसे ही हमारे अंदर से पवित्रता के असर निकल रहे हैं और समस्त चराचर को पवित्र ही नहीं किंतु पवित्रता के फैलाने वाले बना रहे हैं। चाहे यह पवित्रता दीख नहीं पड़ती किन्तु प्लेग के असरों के समान, यह अपना काम अवश्य कर रही है। इन असरों में और प्लेग अपवित्रता और बुराई आदि के असरों में अन्तर यह है कि ईश्वर की कृपा से प्लेग आदि के असर थोड़ी ही दूर तक हानिकारक होते हैं। और उनकी चाल बहुत धीमी होती है। और आगे जाकर यह असर शनैः शनैः निर्बल होते २ मानो नष्ट हो जाते हैं। परन्तु आत्मिक गुणों वाले पवित्रता आदिके असर बिजली से भी अधिक वेग के साथ काम करते हैं। यह सारे संसार में, आकाश, पाताल, सूर्य्य, चन्द्र, तारागण आदि के और समस्त जड़

चैतन्य के प्रत्येक परमाणु के अंदर क्षणमात्र में सुन्दर परिवर्तन पैदा कर देते हैं। और उनको सुन्दर परिवर्तन पैदा करने वाले बना देते हैं। साइन्टिस्ट लोग कहते हैं " Time and space are no bars to their action " अर्थात वक़् और फासला उन के असर में कोई रूकावट नहीं हो सकते। ओह ! कैसे फल हैं उस पवित्र नाम के स्मरणमात्र के ! हम तत्काल आप पवित्र हो जाते हैं और कार्य कारण के नियमानुसार प्रत्येक परमाणु को पवित्र ही नहीं किन्तु पवित्रता फैलाने वाला बना देते हैं ! हम तत्काल वह पारस बनजाते हैं कि जो लोहे को सोना नहीं किन्तु पारस बल्कि पारस बनाने वाला बना देता है ! इस समय हमारा रोम २ इसी काम को कर रहा है। इस नाम का कितना बड़ा फल है हृदय साक्षी देता है कि इस अपने नाम के स्मरण के फल को परमात्मा अपने बच्चों के अन्दर देख रहा है और मानो आश्चर्य भरे आनन्द में उतर रहा है। कैसा स्पष्ट हो जाता है उन दो श्लोकों का मन्तव्य कि जो मैंने आदि में पढ़े हैं अर्थात

" अपवित्रः पवित्रोवा...... "

और " यस्य स्मरण मात्रेण...... "

और तुलसी दास जी का कहा हुआ यह बचन कैसा उत्तम प्रतीत होता है:—

" कहां लों करूं मैं नाम बड़ाई
राम न सके नाम गुण गाई "

T

और

" बार एक राम कहे जो कोई
होय तरण तारण नर सोई "

कैसी सुगमता से मुझ जैसा तुच्छ मनुष्य भी तत्काल अति पवित्र और तरण तारण और ईश्वर के लिये भी आश्चर्य का पात्र बन जाता है ! ओह ! मनुष्य जाति तेरी सौभाग्यता ओह ! परमात्मन् तेरे सुन्दर नियम ! बधाइयां प्यारे भाईयो और प्यारी बहनो तुमको और बधाइयां मुझको !

इसी प्रकार जब कोई खोटी इच्छा किसी के मन में आती है तो वह उसी समय अपवित्र हो जाता है। तो यह समझ लेना सुगम है कि सुन्दर इच्छा के मन में आते ही तत्काल मनुष्य पवित्र हो जाता है। इस समय जो इच्छा हमने प्रकट किई है अर्थात् यह कि सब ईश्वर के भक्त बन जांय और—इसमें संदेह नहीं कि यह हम सब की हार्दिक इच्छा है इस से अच्छी और कौन सी इच्छा हो सकती है ? और यदि बुरी इच्छा से कोई तत्काल अपवित्र बन जाता है तो ऐसी सुन्दर इच्छा से हम निश्चय तत्काल अति पवित्र और पूर्वोक्त प्रकार संसार में पवित्रता फैलाने वाले और ईश्वर की दृष्टि में आश्चर्य प्यार के योग्य बन जाते हैं। कैसी सुगमता से हम ऐसे महान् फल पैदा करने वाले बन सकते हैं और इस समय बने हुये हैं! ओहो ! मनुष्य जाति तेरी सौभाग्यता ! ओहो ! प्यारे ! पर-

T

मात्मन् तेरे सुन्दर नियम! वधाईयां प्यारे भाईयो और प्यारी बहनो तुम को और बधाइयां मुझको।

एक और बात भी विचारने योग्य है कम से कम इस समय जब कि हम उसके प्यारे बच्चों ने ईश्वर को इतना प्रसन्न किया है तो क्या संदेह हो सकता है कि हम उसके सम्पूर्ण आशीर्वाद के पात्र बन गये हों-कि जिसके कारण पवित्रता ही नहीं किन्तु अनेकानेक गुण हमारे रोम रोम में प्रति क्षण भरते चले जाते हैं। और उनके असरों के प्रभाव कार्य कारण के नियमानुसार, हमारे अन्दर से निकल २ कर सारे संसार को मानो निहाल कर रहे हैं। और जैसे एक वृक्ष की जड़ में दिया हुआ खाद तत्काल उस के अन्दर परिवर्तन करने लग जाता है चाहे उस खाद का गुण कुछ काल तक बाह्य आंखों से नहीं दीख पड़ता ऐसे ही इस आशीर्वाद के गुण हमारे अदंर और उन के असर हमारे अन्दर से निकल २ कर औरों के अन्दर चाहे इस समय दीख न पड़ें परन्तु प्रवृत निस्संदेह हो रहे हैं। कैसा सुगम है इतने बड़े गुणों को प्राप्त कर लेना और सारे संसार के लिये मंगल कारी बन जाना और सब को, अपने बुज़ुरगों, प्यारों, अपनी जाति, राजा, प्रजा, छोटों, बड़ों, अच्छों, बुरों, इस लोक और परलोक निवासियों को, सब को ऐसा ही बल्कि इस से भी अधिक संख वाली कहानी के अनुसार मंगलकारी बना लेना और कैसा प्रत्यक्ष व साक्षात हो जाता है वह अति सुन्दर उत्तम बचन जो मैंने आदि में पढ़ा है अर्थात् "तदेव लग्नं सुदिनं तदेव..............." ओहः मनुष्य जाति तेरी सौभाग्यता! ओह! परमात्मन्

तेरे सुन्दर नियम। बधाईयां प्यारे भाईयो और प्यारी बहनो तुम को और बधईयां मुझ को !

और सुनिये ऐसे अति पवित्र और अपने आशीर्वाद के समस्त गुणों से संयुक्त मानो मोहन रूप लने हुए अपने प्यारे बच्चों को इस समय वह परमात्मा देख रहा है और अति प्रसन्न हो रहा है। यदि हम विचार के कानों से काम लें तो हमको मानो हृदय आकाश से एक आकाश बाणी सुन पड़े जैसी महात्मा मसीह को सुन पड़ी थी। हम में से हरएक को वह प्यारा पिता परम आनन्द में भरा हुआ यह कहता प्रतीत होने लगे कि "तू मेरा परम प्यारा पुत्र है तू मेरी परम प्यारी पुत्री है जिस से मैं अति प्रसन्न हूं" या "तू मेरे मन का मोहने वाला है तू मोहन है" जिस प्रकार कृष्ण चरित्र में हम सुनते हैं कि यशोधा माता जी भगवान से कहा करती थी "प्यारे मोहन तेरे नाम के स्मरण मात्र से मेरी छातियों में दूध उतर आता है और मैं कृतार्थ हो जाती हूं" इसी प्रकार वह परम जननी हम में से हरएक को इस समय श्री यशोधा जी से भी बहुत अधिक प्रेम से भरे हुए शब्द कह रही है। हम को यह अनुभव हो या न हो हमको इसका आनंद आवे या न आवे-आनंद का आना न आना तो कुछ पिछले कर्मों से भी सम्बन्ध रखता है-कि जो हमारे मंगल का ही कारण होता है-परंतु आनंद के आने वा न आने से हमारे लाभ में कुछ अंतर नहीं आता। वास्तव में परमात्मा के शब्द उक्त प्रकार कहे ही जाते हैं और यह महान् उत्तम दशा कैसी सुगमता से हम प्राप्त कर लेते हैं ओह ! मनुष्य जाति तेरी सौभाग्यता ओह ! परमात्मन् तेरे

सुन्दर नियम बधाईयां प्यारे भाईयो और प्यारी बहनो तुमको और बधाईयां मुझ को।

मैंने जो अभी कहा है उसका तात्पर्य यह है कि विचार करने पर हमको निश्चय करने के लिये अवसर है कि इस समय भी वह पिता अपने बच्चों के अन्दर अपने नाम के स्मरण के और शुभइच्छयों के और अपने आशिर्वाद आदि के समस्त गुणों को महा आश्चर्य की दृष्टि से देख रहा है और मोहित होरहा है और उसकी परम मधुर परम प्रेम से भरी हुई हृदय आकाश से मानो आकाश वाणी आरही है और कह रही है कि "तू मेरा परम गुणवान् परम परोपकारी बड़ा धर्मात्मा, परम प्यारा राज कुमार है तू मेरा नन्दन है" "तू मेरा मोहन है" इस आकाश वाणीके लिये हमारी सभा में एक प्रकार के संकेत के तौर पर एक शब्द नियत कर लिया गया है वह शब्द है "ओंभूः" जिसके अर्थ और भी हैं परन्तु एक अर्थ जिससे हम ऐसे अवसर पर काम लेना चाहते हैं प्राण प्यारे के हैं। पण्डित लोग कहा करते हैं "भूरितिप्राणः" और इस के लिये इसके अर्थ हम यह लगाते हैं। और जैसा कि किसी कवि ने परमात्मा के विषय में कहा है कि वह कहता है कि "जो मोहे भजे भजूं मैं वाको, पल न बिसारूं एक घड़ी रे" या जैसा कि परमात्मा के प्रेम का अनुभव करके भक्त ने कहा है "माला जपें न हर भजें मुख से कहें न राम। राम सदा हमको भजें और हम करते विश्राम॥" हम

T

लोग अपनी सन्ध्या के समय एक कार्य्यवाही किया करते हैं कि जिसका नाम हमने छोटी सन्ध्या रख छोड़ा है वह यह है कि हम तीन बार कहते हैं। "पिता जी सब आपके भक्त बन जायें" और उसके पश्चात उक्त प्रकार के विचारों को मन में लाकर हम अपने हृदयों में यह समझा करते हैं कि उस महान् महान् ईश्वर ने हमारे अन्दर अपने आशीर्वाद आदि के गुण देख कर हमको एक महा प्रेमी माता या पिता के समान अपने बायें घुटने पर बिठा लिया है और अपना बायां हाथ पूर्ण प्रेम में भर कर अपने सम्पूर्ण आशिर्वाद के साथ हमारे सिर पर फेर रहा है। दाहिना हाथ हम अपना मानो उसको थोड़ी देरको उधारा दे देते हैं। और उस हाथ में एक माला पकड़ा देते हैं। या उंगलियों से काम निकाल लेते हैं। और यह समझते हैं कि वह परम प्रेमी पिता या माता हमारा जप करते हुए " ओं भूः ओं भूः" हम को और हमारे वसुधा रूपी कुटुम्ब के प्रत्येक हमारे प्यारे को कह रहा है। एक या अधिक माला इस प्रकार मानो हम उससे फिरवाते हैं और इस में बहुत थोड़ा समय लगता है इस क्रिया के अर्थात इस छोटी संध्या के फल तो हम अनेक समझते हैं परन्तु उन में से हम इन थोड़े से का वर्णन प्रायः किया करते हैं।

(१) किसी अपवित्र कर देने वाले नाम के स्मरण करने की जगह परम पवित्र परमातमा के नाम का स्मरण करने से हम तत्काल परम पवित्र हो जाते हैं।

T

(२) किसी अपवित्र करने वाली बूरी इच्छा के मन में लाने की जगह एक अति उत्तम इच्छा को मन में लाने से हम तत्कालपरम पवित्र हो जाते हैं।

(३) कोई खोटा, हम को अपवित्र कर देने वाला शब्द अपने मुखसे कहने की जगह एक अति उत्तम शब्द कहने से तत्काल हम परम पवित्र होजाते हैं।

(४) हम को महान् ईश्वर की परम प्रसन्नता की दशा की प्राप्ति हो जाती है कि जो राज्यादि से बढ़कर दशा है।

(५) हमारी ऐसी सुन्दर इच्छा को परमात्मा पूरा करने का मानो ज़िम्मेदार समझा जाता है। और सारे संसार को भक्त बन जाने का हमको निश्चय हो जाता है। मानो हम एक ज़बान हिलाने मात्र से सारे संसार को भक्त बनाने का पुण्य बड़ी सुगमता से कमाने वाले और महादानी बनजाते हैं।

(६) ईश्वर का आशीर्वाद पूर्णतया लाभ करने के हम अधिकारी हो जाते हैं और उस आशिर्वाद से हमारे अन्दर नाना गुण भरजाते हैं।

(७) पवित्रता और ईश्वर के आशीर्वाद के गुण जो हमारे अन्दर भरजाते हैं उन की लहरें हमारे अन्दर से निकल निकल कर सारे संसार के जड़ चैतन्य के एक एक परमाणू में एक ऐसा परिवर्तन पैदा कर देती हैं कि वह परमाणू संख वाली कहनी के अनुसार हम से भी अधिक उत्तम बन जाते हैं।

T

(८) कारण कार्य के नियमानुसार यह परिवर्तन प्रत्येक परमाणू को सारे संसार में सुन्दर परिवर्तन लाने का कारण बना देता है। इस स्थान में मैं अपना यह निश्चय प्रकट करने की आज्ञा चाहता हूं कि इससे यह सिद्ध होता है कि आप महाशयों के चरणों तक में वह गुण भरे हुए हैं कि जिनकी रज के एक एक परमाणू में से जो असर निकल ते हैं यदि कोई और कारण नभी हो तौभी केवल उनसे मेरे अन्दर एक ऐसा परिवर्तन होजाता है कि मैं वास्तव में और ईश्वर की दृष्टी में आश्चर्य मोहन रूप और उसके "ओं भूः! ओं भूः" के जाप का अधिकारी बन जाता हूं और मेरे हृदय की बात यदि आप पूछें तो मैं यह कहूंगा कि मैं आपको कारण बनाये बिना किसी प्रकार भी अपने अंदर सुंदरता का आना बल्कि ईश्वर की प्राप्ति तक को चाहता ही नहीं हूं। मैंने यही बात प्रयाग राज के कुंभ के अवसर पर वहां से अपने प्यारे भ्राताओं को लिखी थी और आप भी मेरी दृष्टि में आयु के विचार से कोई माता पिता कोई भ्राता भगनी कोई पुत्र पुत्री हैं और वही बात मैं आपसे निवेदन करता हूं मुझ को इस में ही आनंद आता है और मुझ को यह भी प्रतोत होता है कि अपने बच्चों की ओर मेरा इस प्रकार का भाव देख कर परमात्मा भी मुझ से अति प्रसन्न होते हैं। आप के चरण रज में से कुछ लहरें अवश्य निकलती ही हैं और उक्त विचारों से हम को सिद्ध हो गया है कि वह लहरें सारे संसार के अंदर और मेरे अंदर भी सुन्दरता अति उत्तम प्रकार की लाने वाली हैं। और इस

को बिचार कर मेरा इस कानफ्रेंस के सभापति पद पर उपस्थित दिखाई देना कौन आश्चर्य है ? और जिन के चरण कमल की रज ऐसी है उनके गुणों को कौन वर्णन कर सकता है। इस रज के कारण मैं ऐसा बन गया हूं कि मेरे गुण वर्णन होने सर्वथा असंभव हैं। यदि मैं ऐसा न मानूं तो मैं आप का और ईश्वर के नाम के महात्म आदि का बड़ा अनादर करने के महा पाप का भागी बन जाता हूं।

(९) इस अति उत्तम दशा में अपने बच्चों को देख कर जो हम उक्त प्रकार ईश्वर को अपना "ॐ भूः ॐ भुः" का जाप करते हुए समझते हैं उससे जो आनंद हम को आसकता है या आता है वह संसार के सारे पदार्थों को पाकर भी किसी को नहीं आसकता है।

(१०) यह आनंद कारण बनता है हमारे खून के बढ़ने वीर्य्य के पुष्ट होने, प्रेम-भक्ति-श्रद्धा-शांतिः-बुद्धि-विचार-शक्ति-तेज बल-पराक्रम-मरदानगी-पुरुषार्थ हिम्मत-हौसला दृढ़ता-विश्वास-नम्रता-सेवा-सहनशीलता-संतोष-दयाक्षमा कोमलता-गम्भीरता आदि अनेक गुणों के हमारे अन्दर आकर बड़ा सुन्दर परिवर्तन पैदा करने और उक्त विचार अनुसार और कारण कार्य के नियमानुसार सारे संसार में सुन्दरता फैलाने और अपने लिये और अपने सब प्यारों के लिये सारे संसार को मंगलमय बना लेने और ईश्वर की और भी अधिक प्रसन्नता के कारण बनने का।

(११) इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि दुःख शोकादि से हमारे अन्दर निर्बलता आदि पैदा होकर हमारे अन्दर से वायु आदि को अपवित्र और दूसरों के लिये हानि कारक बनाने वाले असर निकलते हैं। अर्थात दुःख शोच आदि पाप का कारण है और आनन्द धर्म का कारण है। कैसे सुन्दर नियम हैं हमारे परम पिता के! हम को मानो आज्ञा यह है कि हम चिन्ता, शोच आदि न करें, किन्तु आनन्दित रहें, और आनन्द रहने के लिये पूर्वोक्त प्रकार हमारे पास सामग्री बहुत है। इस आनन्द का एक फल यह भी होता है कि इस से धर्म का उत्साह और पाप से घृणा, धर्म के काम करने और पाप से बचने के लिये अर्थात काम, क्रोध, मोह, लोभ आदि को विजय करने के लिये आत्मिक बल हमारे अन्दर प्रतिक्षण भरता जाता है। हमारे विचार ऊंचे होते चले जाते हैं। और जैसा कि पहिले कह आये हैं हमारे अन्दर बुद्धि, बल, तेज, प्रेम, हिम्मत, मरदानगी, हौसला, पराक्रम, धर्म आदि वृद्धि पाते जाने के कारण हम धन, विद्या आदि सारे पदार्थों और गुणों में और अपने और अपनों के इस लोक के और परलोक के सच्चे सुख के साधनों में उन्नत होते जाते हैं। और (यदि यह कहा जा सके तो) हम धर्म अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति के साधनों में अपने आपको उन्नत होता पाते जाते हैं।

(१२) हम को सोते, जागते, खाते, पीते, नहाते, धोते, लिखते, पढ़ते, सौदा मोल लेते, तथा बेचते, कार व्यवहार

करते, गृहस्थ आदि के सब काम करते हुए, दुःख, सुख, यश, अपयश, जीवन, मरण, आदि प्रत्येक दशा में हर समय यह प्रतीत होने लगता है कि ईश्वर के हाथ में मानो माला है और वह हमारा वही "ओं: भू: ओं: भू:" का निरंतर जप कर रहा है, कि जिस से हम को और भी आनन्द और उस आनन्द के लाभ प्राप्त होते रहते हैं। और हमारे जीवन का एक एक पल सारी सृष्टि के लिये बड़ा और अत्यंत सफल तथा उपयोगी बनता जाता है और सारी सृष्टि को हमारे लिये ऐसा ही उपयोगी बनाता जाता है। यह एक महानंद की दशा है कि जिस को जीवन मुक्ति की दशा कहना शायद अनुचित न हो। बादशाहतों का लाभ इस दशा के आगे कुछ भी नहीं प्रतीत होता। प्रत्येक मनुष्य पापी से पापी और मूर्ख से मूर्ख भी इस दशा में बहुत जल्दी। बल्कि तत्काल अपने आप को पहुंचा" हुआ पा सक्ता है- ईश्वर और उसकी सारी विभूति उसको अपनी नज़र आती है-सारा संसार उसको अपना और अपने सब प्यारों का अत्यन्त मंगल का कारण बना हुआ दीख पड़ता है-वह अपने सारे काम ईश्वर के और सृष्टि के प्रेम और शुक्रगुज़ारी और कृतज्ञता से भर कर आनन्द पूर्वक निष्काम भाव के साथ करने लगता है-और उन कामों को ईश्वर अपने प्यारे पिता की प्रसन्नता और ईश्वर की संतान, अर्थात् अपने वसुधा रूपी प्यारे कुटुम्ब के परम हित का कारण समझ कर आनन्द से भरा रहता है-द्वेषभाव किसी से रखने की उसको कोई आवश्यकता ही नहीं रहती है। प्रथम

T

तो सब उसको अपने प्यारे नज़र आते हैं। दूसरे सब उस को अपने सदा हितकारी प्रतीत होते हैं कि जिन की चरणों की रज तक से उसको महा लाभ पहुंचाने वाली लहरें या असर प्रति क्षण निकलते प्रतीत होते हैं।

(१३) ईश्वर को यदि कल्पित भी माना जावे और इस प्रकार के विचार मन में लाकर उक्त प्रकार यह अति सुगम छोटासा साधन वा छोटी सन्ध्या की जावे, तब भी आनन्द आने में और उस आनन्द के फलों में कोई भी भेद किसी प्रकार का पैदा नहीं होता है।

(१४) परन्तु जो मनुष्य ईश्वर को नहीं मानते हैं और कल्पित ईश्वर को मन में लाने में कठिनता अनुभव करते हैं उनको मेरी तुच्छ बुद्धि अनुसार कोई और विचार उत्तम प्रकार के और बड़े आनन्द के लाने वाले मन में लाने उचित हैं। और यदि वह मेरी सलाह पूछें तो मैं उन से यह निवेदन करूंगा कि वह किसी मनुष्य (वास्तविक वा कल्पित) का ध्यान कर लिया करें कि जो एक वास्तविक या कल्पित ईश्वर की प्रसन्नता का और संसार की और उनकी भी बड़ी उन्नति का कारण अपने आप को समझता हुआ आनन्द लूट रहा है। और उस आनन्द से सारे संसार में और उन में भी महा उन्नति पैदा कर रहा है। इससे उनको पूरा आनन्द उसी प्रकार का आकर उनको उतना ही उपकारी इत्यादि बना देगा।

T

(१५) इस छोटे से साधन या छोटी संध्या से नित्य प्रति यदि काम लिया जावे तो जैसा के पहले कह आये हैं मनुष्य अपनी जाति ही की उन्नति नहीं किन्तु सारे संसार की उन्नति का कारण बन जाता है और अपने आप को समझने लग जाता है। और उस के सारे काम केवल अपने प्यारे पिता की प्रसन्नतार्थ और अपने बसुधा रूपी कुटुम्ब के हितार्थ, प्रेम और आनंद के साथ निष्काम भाव के साथ होने लगते हैं। वह इस प्रकार के भक्ति भाव को ऐसा रसीला और आनन्द दायक समझता है कि ज्ञान उस को बड़ा शुष्क पदार्थ प्रतीत होता है। भक्ति भाव बिहीन ज्ञानी लोग उस को दया के पात्र नज़र आते हैं। ज्ञान की दशा का जो कुछ आनंद वा लाभ होना संभव है वह इस भक्ति भाव के अंतरगत या इस का एक अंग होता है। ज्ञानी स्वामी रामतीर्थ के समान अपने आप को ईश्वर और संसार का मालिक समझता है और भक्त ईश्वर का पुत्र होने के कारण अपने आप को ईश्वर से बड़ा, ईश्वर को पुन्नाम नरक से त्राण करने वाला, उसका नन्दन और उसकी समस्त बिभूति का मालिक समझता है। भक्ति की दशा का आनन्द और लाभ ज्ञान के आनन्द से अधिक होता है इस लिये ज्ञान की दशा की भक्त कुछ भी परवाह न कर के गोस्वामी तुलसी दास जी के इस बचन का अनुभव करता हुवा महा आनन्द का जीवन व्यतीत करता है। अर्थात्—

चौपाई—कलि नहीं कर्म न ज्ञान बिवेकू।
राम नाम अवलम्बन एकू ॥

T

परंतु राम नाम का महात्म केवल कलियुग के लिये ही नहीं किन्तु सदैव काल के लिये मेरी समझ में ऐसाही है और कर्म और ज्ञान और बिवेक और धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, आदि धर्म के दस लक्षण और यम और नियम का पालन इस नाम के अवलम्बन मात्र, इस शरणांगत धर्म मात्र रूपी वृक्ष के आवश्यक फल हैं। हो नहीं सकता है कि मनुष्य इस सहज साधन से काम लेवे और उस के जीवन में शनै शनै यह सब लक्षण शीघ्र ही न दीखने लगें। और यदि मान भी लिया जावे कि ज्ञानकी दशा भक्ति की दशा से कुछ अच्छी है तो इस छोटी संध्या के करने वाले; को वह दशा अवश्यमेव और शिघ्र प्राप्त हो जावे गी। उसके अधिकारी सबसे प्रथम और सबसे बड़े इस छोटी सी संध्या के करने वाले होंगे।

सज्जन गण आइये हम भी उस पवित्र नाम पर विश्वास रख कर आनंद में भर कर अपनी कानफ्रेंस के काम को आरंभ करें इसलिये भी कि आनंद ही हम को सफलता का कारण दीख पड़ता है।

लार्ड हार्डिंज पर बम का चलना।

यह एक बड़ा शोक है कि इस समय हमारे आनंद में विघ्न डालने वाली एक बहुत खराब बात हुई है कि जिससे सारे देश निवासियों को बहुत बड़ा खेद हो रहा है। सारा देश हमारे प्यारे वाइसराय लार्ड हार्डिंज की ओर से बहुत ही प्रेम भरे भाव रखता है। ऐसे हाकिम देश में आज तक थोड़े ही आये होंगे। परन्तु ईश्वर की

सृष्टि विचित्र है। ऐसे नेक दिल और महा उत्तमआत्मा के लिये भी किसी दुष्टात्मा के दिल में द्वेश, और इतना बड़ा द्वेश पैदा हुआ है कि जब कि बड़ा भारी ऐन खुशी का समय था कि जब हिज़ इक्सैलेन्सी (His Excellency) का जलूस २३ दिसम्बर को चांदनी चौक में से गुजर रहा था ऐन उस वक्त किसी महादुष्ट पुरुष ने हमारे प्यारे वाईसराय साहिब की जान पर हमला किया। उसने एक बम चलाया और अपनी समझ में तो उसने कोई कसर छोड़ी नहीं किन्तु कोटानु कोट धन्यवाद है उस परमात्मा को कि उनकी कृपा से लेडी हारडिंज साहिबा को तो किसी प्रकार की चोट तक भी नहीं आई और लार्ड साहिब को चोट तो बहुत सख्त पहुंची परन्तु उनकी जान बच गई। इस खबर को पाकर मैंने ब हैसियत प्रेसिडेन्ट इलेक्ट इस कानफ्रेंस के एक तार लार्ड साहिब बहादुर के नाम और एक लेडी हारडिंज साहिबा के नाम २४ दिसम्बर को भेजा था। लेडी साहिबा के नाम के तार के शब्द यह थे।

"H. E. Lady Hardinge, Dehli.
Beg to express abhorrence at fiendish outrage. Thank Almighty Father for Your Excellency's narrow escape and pray for His Excelleney's speedy recovery. Baldeo singh, President Elect All India Vaish Conference Calcutta."

और लार्ड साहिब के नाम के तार के शब्द यह थे—

"H. E. Lord Hardinge, Dehli.
Beg to express abhorrence at fiendish outrage. Thank

Almighty Father for Her Excelleney's narrow escape and pray for Your Excelleney's speedy recovery. Baldeo Singh President Elect all India Vaish Conference, Calcutta."

ईश्वर करे कि लोगों की बुद्धियां शुद्ध हों और कोई बुरे काम न करें। इसके संबंध में मेरी राय में एक बाक़ायदा रिज़ोल्यूशन भी इस कानफ्रेंस में पास होना चाहिये।

इस कानफ्रेंस में जो जो बातें आप के रूबरू पेश होवेंगी उन पर पिछले बीस साल से जाति के महानुभाव विचार कर रहे हैं और उन पर जाति को चलाने के लिये प्रयत्न हो रहा है। यद्यपि प्रत्यक्ष में कोई बड़े फल नहीं बिचारों और प्रयत्नों के साधारण दृष्टि डालने पर चिन्ह दीख पड़ते हैं और बहुत सी हालतों में इसमें जाति के भाईयों का दोष भी नहीं समझा जा सकता है। किन्तु उसके कारण ऐसे होते हैं कि जिन पर उनका बस नहीं। जैसे कि पंचायत के लिये भरोसे के पंच न मिलना, इत्यादि। और ऐसे प्रत्यक्ष में बढ़े फल न देख कर कितने हमारे भाई निराश भी हो जाते हैं। तथापि गूढ़ दृष्टि से देखने वाले इस बीस बर्ष की कार्य्यबाही को बड़ा सुन्दर फल समझते हैं। देखिये तो सही, देश की और जाति की क्या दशा थी। क्या अज्ञान पक्ष पात आदि का घोर अन्धकार छाया हुआ था। क्या यह सम्भव था कि इतनी बड़ी अन्धकार की दशा हालात मौजूदा में दो, चार, दस

T

काल के प्रयत्नों से एक दम बदल जाती ? आप संसार में देखते हैं कि प्रथम एक माली बागीचा लगाने के लिये भूमि को तैय्यार करता है। फिर उसमें फलदार वृक्षों के बीज को बोता है। उसमें खाद पानी आदि देता है शनैः २ वह बीज उग कर एक छोटा पौदा होता है कि जो बढ़ता २ बरसों में जाकर फल देता है। आपने बहुत बड़ा फल पैदा करना है। यदि आप की भूमि तैय्यार होकर इतने काल में बीज बोया गया है तब भी बड़ा काम होगया। परन्तु विचार कर देखियेगा। आप का पौदा उग आया है। कुछ बढ़ भी गया है। और बधाइयां आप को, इस पर किंचित फल भी लगने लगा है। न केवल आप की जाति के किन्तु देश भर के लोगों के खयालात में बड़ा भारी परिवर्तन हो गया है। आप के जितने रेज़ोल्यूशन हैं उन में से एक एक के लिये अधिकतर लोगों की हमदर्दी और सहानुभूति तो अवश्य ही है। पिछले कर्मों और संस्कारों के कारण निर्बलता आदि होने और आत्मिक बल के अभाव से और अन्य कारणों से बड़ा भाग आप की जाति के मनुष्यों का उन पर नहीं चलता या नहीं चल सकता है। परन्तु आप ने बहुत बड़ा काम बना लिया यदि खियालात में परिवर्तन पैदा कर दिया। आप जल्दी देखेंगे कि वह खयालात ही अमल की सूरत में नजर आवेंगे। ईश्वर का आश्राय पकड़ कर यत्न किये जाइये आप के मनोरथ अवश्यमेव सफल होवेंगे।

इस में संदेह नहीं है कि जो कुछ काम हुआ है और जो कुछ होने को बाकी है। उसमें कोई निस्बत नहीं है। बहुत २ कुछ होने को बाक़ी है। परन्तु जो कुछ हुआ है वह हमारी हिम्मत और हौसले को बढ़ाने के लिये ईश्वर की कृपा से काफ़ी है। साथ ही हमको अधिक सफलता प्राप्त न होने का कारण एक और भी है उसको वर्णन करने में मैं एक कहानी से सहायता लेकर अपना अभिप्राय सुगमता से प्रकट कर सकूंगा। वह कहानी यह है कि एक लड़का था जिसको गुड़ खाने का अभ्यास था और गुड़ से उसको बहुत हानि होती थी। उसके माता, पिता, गुरु आदि ने उसको बहुत कुछ समझाया, धमकाया, मारा, पीटा, और सब प्रकार के यत्न किये परन्तु लड़के का गुड़ खाना नहीं छूटा। और उसके स्वास्थ को बहुत हानि पहुंचती रही। और वह बहुत निर्बल हो गया। अंत में उसकी माता उसको एक महात्मा के पास उपदेश कराने को लेगई। महात्मा ने कुछ देर चुप रह कर कहा कि आठवें दिन लड़के को लाना तब उपदेश करेंगे। माता ने बहुत कुछ चाहा कि उपदेश उसी समय हो जावे और आठ दिन वृथा न जायें। परन्तु महात्मा ने न माना। माता मजबूरन लड़के को लेकर लौट आई। और आठवें दिन फिर उस को महात्मा के पास ले गई। महात्मा ने थोड़ा लड़के को प्यार किया। और केवल इतनी बात कही कि "बेटा गुड़ न खाया करो गुड़ से तुम को हानी पहुंचती है"। और कह दिया के जाओ। परन्तु चलते समय उस की माता से कह दिया कि आठवें

T

दिन वह फिर उस को ले आवे। उस छोटे से उपदेश से माता को बड़ा क्लेश हुआ। वह जानती थी कि इस से बहुत अधिक बातें लड़के को उस के घर पर सब ने समझाई थीं और अब महात्मा ने एक बेगार सी टाल दी। निराश सी होकर वह लड़के को लेकर घर आई। परन्तु लड़के ने उसी समय से गुड़ खाना छोड़ दिया और दिनप्रति दिन उसके स्वास्थ्य में उन्नति होती गई। आठवें दिन बड़ी प्रसन्न होती हुई माता लड़के को लेकर फिर महात्मा के पास गई, और हाल सुनाने के पश्चात पूछने लगी कि पहिले ही बार महात्मा जी ने क्यों उपदेश नहीं किया, और आठ दिन क्यों वृथा गंवाये। महात्मा ने उत्तर में कहा कि माताजी हम आप भी गुड़ खाया करते थे, और उससे हम को भी हानी पहुंचती थी। परन्तु हम गुड़ खाना छोड़ते नहीं थे। अब लड़के पर हम को दया आई। परन्तु हम जानते थे कि हमारे उपदेश में उस समय तेज और बल नहीं था और उस दिन के उपदेश से लड़का गुड़ खाना न छोड़ता, हम ने उसी समय गुड़ को छोड़ देने का संकल्प कर के अपने अन्दर ईश्वर के नाम के स्मरण आदि द्वारा तेज और बल भरना आरम्भ किया। आठ दिन में हमारे अन्दर बहुत कुछ तेज और बल आगया। तो हमारे उपदेश ने असर किया। हम तेरे लड़के के कृतघ्न हैं कि उस के कारण हमारा गुड़ खाना भी छूट गया और हम को और भी बहुत लाभ पहुंचा। तेज और बल आदि बहुत गुण हम को प्राप्त हुये।

मित्रवर यह सच है कि जिसके अन्दर तेज और बल होगा उसके ही उपदेश और समझाने और लेकचर आदि प्रयत्न से लोग मानेंगे । वीर्य्य के नाश आदि अनेक कारणों से आज कल के लोग तेज और बल विहीन हैं। और क्या आश्चर्य है कि उनके लेकचर आदि को लोग न मानें। ईश्वर हमारा पिता है। उसके भण्डार तेज-बल और २ अनेकानेक गुणों से भरपूर हैं। और वह हमारे ही लिये हैं। और हमारे ही हैं। यदि हम उन भण्डारों को अपने समझ कर प्रसन्न रहा करें तो हम ईश्वर की प्रसन्नता के और संसार की सेवा के कारण बन जाते हैं। क्या अच्छा किसी ने कहा है।

चार पदारथ पुत्र हित, लिये खड़े अकुलात।
ज्यों सुत को भोजन लिये, करत चिरौरी मात॥

चार पदार्थ से प्रयोजन धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष से है। और ईश्वर के भण्डार में इन के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है परन्तु यदि कुछ और समझा भी जावे तो उस के अनंत प्रेम की ओर दृष्टि डाल कर हम इस शब्द को इस प्रकार पढ़ना उचित समझेंगे, अर्थात्-"सर्व पदार्थ पुत्र हित लिये खड़े अकुलात। ज्यों सुत को भोजन लिये करत चिरौरी मात॥"-इसी प्रकार एक अङ्गरेज अनुभवी ने भी अच्छा कहा है

"Yes, God is paid when man receives. T'injoy is to obey"

और एक दूसरे का बचन है "He yearneth to bless"

T

और हमारे प्यारे कृष्ण भगवान भी कैसे शान्ति के शब्द कहते हैं।

"सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणम् ब्रज। अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥"

अर्थ—कि तुम से धर्म नहीं कमाये जाते हैं तो कुछ परवाह नहीं। धर्म को या धर्म कमाने के ख़याल को छोड़ो और एक हमारी शरण वल्कि हमारी गोद में आजाने मात्र के धर्म का पालन करलो और तुम महा धर्मों को कमाने वाले फौरन् से पहले बन जाओगे। हमारी ओर ध्यान देते ही तुम पवित्र और पवित्रता आदि के संसार में फैलाने वाले अर्थात् महा धर्म के कमाने वाले बन जाओगे।

इस प्रकार के अनेक भाव चित्त में लाकर मनुष्य शीघ्र ही बलवान, तेजवान, आदि बन सकता है। और फिर उसकी वाणी में भी चाहे तत्काल असर न भी हो परन्तु उसको अपने मनोरथों की सिद्धि कम से कम परोक्ष रूप से तो अवश्य ही प्राप्त हो जाती है।

प्रेम और एकता

अब हम को अपनी जाति के प्रयत्नों के फलों की ओर थोड़ा ध्यान देना चाहिये। सब से प्रथम परस्पर के विरोध के दूर होने और मेल जोल होने के विषय में जिस प्रकार के इशारे कानफ्रेंस में होते हैं उनके विषय में यह है कि आप भली भांति समझ सकते हैं कि सब लोग आपके इशारों की क़दर को जानते हैं। सब जानते हैं कि आपस के झगड़ों का पंचायत आदि से फैसला होना अदालत के मुकाबले पर कितना अच्छा है। अदालत में

T

जाने से कितना रुपया, कितना समय, वृथा ख़र्च होता है। कितने लोगों की खुशामदें आदि करनी पड़ती हैं। शांति का खून होता है। गो प्रायः भरोसे के पंचन मिलने के कारण अदालतों में झगड़े जाते हैं कि जो लोगों की तबाही के कारण होते हैं।

भिन्न २ फिर्कों में मेल जोल की आवश्यकता को भी लोग मेरी राय में समझने लगे हैं। और आपस के शादी बिवाह और खान पान की कदर को भी थोड़ा बहुत पसंद करते हैं गो कारणवशात् इस पर अभी तक अमल बहुत कम होता है मैं यह अवश्य कहूंगा कि इस विशय में जाति में जो कुछ अब तक हुआ है वह बहुत ही थोड़ा है। कुछ भी नही है हालां कि यह एक बड़ा अहम बिषय है। प्रेम की महिमा का कौन वर्णन कर सक्ता है? जिस मनुष्य के हृदय में प्रेम है उसको स्वर्ग को तलाश करने की आवश्यकता नहीं है। प्रेम में जो सुख है वह स्वर्ग से बढकर है जिस हृदय में प्रेम होगा उस में ईश्वर अपने सारे ऐश्वर्य और गुणों के साथ आप बिराजमान होंगे। प्रेम बिहीन मनुष्य वास्तव में बड़ा दया का पात्र हैं ओह! उस को ज्ञान नहीं कि वह अपना कितना नुक़सान करता है। बादशाहत का छिन जाना इतना नुक़सान नहीं कि जितना प्रेम न होने से होता है। झगड़ों से और मेल, जोल, शादी, बिवाह के आपस में न होने आदि से जो कुछ भी धन या समय या आराम या सुगमता का नुकसान होता है वह बहुत ही बड़ा है परन्तु सब से बड़ा नुक़सान तो इसमें यह है कि ईश्वर का वास आदमी के

हृदय में नहीं रहता है और वह ईश्वर से कोई अपनी या अपने प्यारों की भलाई की विश्वय आत्मक आनन्द दायनी आशा नहीं रख सक्ता है। और शांति के जीवन से विहीन हो जाता है।

इस सम्बन्ध में दो चार बातों पर अलावा औरों के ध्यान दिया जावे तो शायद अच्छा हो। हम जरा सोचें कि जिन से हम झगड़े करते है वह कौन हैं याद रहे कि "नूरें नज़र हैं वह भी किसी ताज़दार के" वह बहुत बड़े राज कुमार हैं-वह राज राजेश्वर अर्थात ईश्वर के पुत्र हैं उनसे बैर भाव रखना, उनसे प्रेम न रखना मानो समुद्र में रहना और मगर मच्छ से बैर रखना है। हम यह भी याद रक्खें कि सारा संसार हमारा परिवार है। सब से हमारा बड़ा नज़दीकी रिश्ता है। क्या अच्छा हो कि हम सब को नज़दीक से नज़दीक के रिश्तेदार और सम्बंधी की निगाह से देखें। बूढ़ों का माता पिता की बराबर वालों को भाई बहन की और छोटों को बेटा बेटी की दृष्टि से देखें और ऐसे माता पिता भाई बहिन और बेटा बेटी उनको समझें कि जो पूर्वोक्त कारणों से अति उत्तम हैं फिर तो इसी दुनिया में स्वर्ग का आनन्द आने लगे।

हम अपने दुश्मन की असलियत पर पहले कहे हुये ख्यालात की रोशनी में नजर डालें तो हम को दीख पड़ेगा कि वह ईश्वर का मन मोहन है। ज़ाहरा चाहे वह बहुत बुरा प्रतीत होता है परन्तु वास्तव में उस के रोम रोम में से ऐसे पवित्र और बलवान असर या लहरें निकल रही हैं

कि जिन से सारे संसार को और हम को और हमारे सा
परिवार को भी अति उत्तम प्रकार का अनन्त लाभ पहुं
रहा है वह हम को मानो निहाल कर रहा है ।

जब कभी हम को किसी से कोई हानि या क्लेश
पहुंचता है तो वह हमारे ही कर्मों का फल होता है, इस
में कुछ भी संदेह नहीं हो सकता है, और जिस के द्वारा
यह हानि या क्लेश हमको मिलता है वह बेचारा मुफ्त में
अपराधी बन जाता है, और गो यह हमारे लिये कोई
शांति की बात होनी नहीं चाहिये, परन्तु यह निश्चय है
कि वह अपने कर्मों के फल को अवश्य भोगेगा और यदि
हम उससे द्वेष आदि करें तो हम आगे को अपने लिये
कांटे बोलेते हैं, इस प्रकार बिचारने पर हम अपने नुक-
सान या क्लेश की निवृत्ति जायज तरीके से पंचायत आदि
के द्वारा और शायद प्रेम के साथ करना पसंद करेंगे ।

परन्तु किसी मनुष्य को जो किसी से द्वेष रखता है
और प्रेम भाव नहीं रखता है दोष देना बड़ा अन्याय है,
उस बेचारे का स्वभाव द्वेष का है यह उस का कसूर नहीं है,
उस के मन का कसूर है, उस के मन को बदल दो, उस के
मन में प्रेम पैदा कर दो और फिर वह द्वेष करे और प्रेम
न करे तो मैं जिम्मेवार हूं ।

बहुत लोग चाहते हैं कि उनमें से द्वेश क्रोध आदि
दूर हो जावें । एक महाशय कहा करते हैं कि मैं पांच
सौ रुपये उस आदमी को दूं जो मेरे क्रोध को दूर करदे

यह लोग अपने स्वभाव से लाचार हैं। वह दया के पात्र हैं। मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार तो पूर्वोक्त छोटी संख्या से काम लेने से स्वभाव बदल जाना संभव है।

विशेष करके जिस समय किसी से हमको किसी प्रकार का दुःख पहुंचे, उसी समय हम ईश्वर से अपने मन ही मन में कहने लगें कि "पिता जी सब आप के भक्त बन जांये" अर्थात् ईश्वर से मिलने के पूर्वोक्त प्रकार के परमानन्द और महा आनन्द का लाभ करके दुःख के कारण मनुष्य को और दुःख को भी बाली के समान समझ कर सुग्रीव की न्याई कहने लगें।

चौपाई—बालि परमहित जासु प्रसादू।
मिले हो राम तुम समनविषादू॥

ऊपर प्रकट किया गया है कि आनन्द किस प्रकार कारण होता है प्रेम आदि सब प्रकार के आत्मिक गुणों के पैदा होने का।

असल बात यह है कि पूर्वोक्त प्रकार ईश्वर के साथ बात करने और उसको अपनी माला फेरते हुए समझने से उसकी कृपा से अपने आपको उससे बड़ा समझने से हमारे अन्दर से द्वेष, अभिमान, आदि सब दोष दूर होकर प्रेम नम्रता, क्षमा आदि अनेक गुण भर जावेंगे। और हम धर्म के काम आपही आप करने लगेंगे। हम आपही फ़िर्कों को शादी, विवाह, खान, पान, आदि द्वारा मिलाने में आनन्द मानेंगे। बल्कि मैं तो यह कहूंगा

कि जैसा कि शायद मैं पहले सिद्ध कर सका हूं, हम और आप यदि इस पर चलें तो हम आकाश को प्रेम आदि दैवी, ईश्वरी गुणों से भर सकते हैं। और यह गुण आप ही आप औरों के अंदर भरते चले जायेंगे अब, और इस समय हम और आप ईश्वर के आशिर्वाद के असर में हैं। इस समय हमारे अंदर से अति उत्तम गुणों के भरे हुए असर निकल रहे हैं और सारे संसार में परिवर्तन हो रहा है और हम जल्दी देखेंगें कि लोगों के स्वभाव बदल गये हैं उनके अंदर से द्वेष निकल गया है। और प्रेम भर गया है और वह स्वर्गीय आनंद लूट रहे हैं। और उसके फल अर्थात् सुन्दरता को सारे संसार में फैलाते हैं।

नागरी प्रचार

देव नागरी और संसकृत की शिक्षा के विषय में तो मुझ को विशेष कुछ कहने की आवश्यक्ता नहीं है इस की क़द्र तो बहुत कुछ होती जा रही है, इस विषय में तो हम अपने आप को जितनी कुच बधईयां दें थोड़ी हैं अंग्रेजी के साथ जो उर्दू फ़ारसी हमारे छात्रों की दूसरी ज़बान हुआ करती थी वह बहुत बंद हो गई है, और होती चली जाती है, और उसके बदले दूसरी ज़बान हिन्दी और संसकृत होती जाती हैं और आशा होती है कि शीघ्र बड़ी और पूरी उन्नति इस विषय में दीख पड़े गी, परन्तु इस के साथ हम को यह याद रखना उचित है कि हम द्वेष भाव को हृदय में रख कर कोशिश न करें, किन्तु उदार चित्त होकर इस बात को वही अपना धर्म या ईश्वर की आज्ञा समझकर संसार की सेवा के निमित्त

करने के परम लाभ को उठावें इस उदारता की और धर्म भाव की प्राप्ति का सुगम साधन भी वही पूर्व वर्णन की हुई छोटी संध्या है कि जो बड़ी सध्या आदि की ओर हम को आप ही खींच ले जायेगी।

स्त्री शिक्षा

एक और बात जिस पर आप का ध्यान दिया जाना उचित है वह एक बहुत बड़ी और अहम बात है, वास्तव में यदि हम इसमें सफलता प्राप्त कर लेवें तो हमारे सारे ही काम सिद्ध हो जावें, वह बात स्त्री शिक्षा है, इस की ओर पहिले तो बड़े पक्ष पात के साथ देखा जाता था, परन्तु शुक्र है परमात्मा का कि अब तो सारे देश में इसकी क़द्र पैदा होगई है, बहुत लोग यहां तक सोचने लगे हैं कि यदि उनकी पुत्रियां विद्या हीन होंगी तो अच्छे घरों में उनकी शादी नहीं होसकेगी, लोग सोचने लगे हैं कि अच्छे पुत्र उत्पन्न करने और क़ौम को बनाने या जीवित रखने के लिये विदुषी माताओं की आवश्यकता है इस में संदेह नहीं कि पूरा प्रबंध न होने से स्त्रियों का फ़ज़ूल ख़र्च और मेम साहवों वाले स्वभाव वाली बन जाना सम्भव है, यह भी सम्भव है कि हिन्दू जाति की स्त्रियों की जो सब से बढ़ी खूबी पातिव्रत धर्म की है, उस को हानि पहुंचे परन्तु इस भय से इस काम को ही न करना बहुत बड़ी हानि सरपर रखना है, शुक्र है परमात्माका कि समस्त हिन्दू जाति के लोग यह सोचने लगे हैं कि फ़ज़ूल ख़र्ची आदि के स्वभाव से बचे रहने का प्रबन्ध कर ते हुए स्त्रियों को ऊंचे दर्जे की शिक्षा का दिया जाना एक बड़ी आवश्यक बात है, जगह २ कन्या पाठशालायें

जारी हो रही हैं, और बहुत और जारी हो जाती यदि अध्यापिकायें मिल सकीं इस सम्बन्ध में तो अब बड़ा फिक्र है तो यह कि अध्यापिकायें कहां से आयें। देहरा दून में एक बहुत अच्छी कन्या पाठशाला है और अध्यापिकायें न मिलने के कारण उस में ईसाई अध्यापिकायें एक दो रखनी पड़ीं, इस समय हम को इस बात पर ज़ोर देने की आवश्यकता कम है कि लड़कियां पढ़ाई जायें क्योंकि लोग आम इस काम को करना चाहते हैं, हमको यह प्रबन्ध करने की अधिक आवश्यकता है कि अध्यापिकायें तैयार की जायें।

जो कन्या पाठशाला में अब हैं उन में यदि कन्यायें पढ कर तैयार भी होवें तो वह अपने घर बार के काम में लग जाती हैं और उन में से बहुत थोड़ी होती हैं कि जो अध्यापिका के काम के लिये मिल सकें, इस विषय में मेरी राय जिस से मेरे कई एक मित्रों ने अपनी पूरी सम्मति प्रकट की है यह है कि श्री हरिद्वार, बृन्दाबन, काशी जैसे कई स्थानों में इस प्रकार के बिधवा आश्रम बनाये जायें कि जिन के साथ बिधवाओं को अध्यापिका और उपदेशिका बनाने की शिक्षा दी जावे, इस का पहिला फल तो यह होगा कि बिचारी बिधवाओं की सहायता खान पान आदि की हो जावेगी, और इस के अतिरिक्त उन के जीवन अनंत सुफल हो जावेंगे, दूसरे बिधवायें शिक्षा पाकर अन्य काम में लगना कम पसंद करेंगी, किन्तु हमारी जरूरत को पूरा कर सकेंगी, इस विषय में जहां तक कि मुझको पता है, कुछ कहीं २ सोचा भी जा रहा है और,

वैश्य जाति को इस ओर बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है, परन्तु पूर्वोक्त छोटी सन्ध्या मनुष्यों को अपने कर्तव्य धर्मों की ओर अवश्य लगायेगी, और हमारी यह आवश्यकता भी निश्चय पूरी होवेगी और फ़ज़ूल ख़र्ची आदि के स्वभाव का भय भी हम को इस दशा में नहीं हो सकता है।

रीति सुधार

इस के पश्चात् मैं आप की सेवा में एक और अमर पेश करता हूं कि जो सब के परन्तु अधिक तर हमारे मारवाड़ी भाईयों के विशेष ध्यान के योग्य है अर्थात् शादी आदि के शुभ अवसर पर बाग़ बहारी लुटाना, बखेर करना, भूर बांटना, खाली दिखावे के सामान बहुत सारे करना, रंडियों आदि का नाच कराना, इस प्रकार की जो बातें हैं उनको बन्द किया जाना--बहुत बार क्या क़रीबन् हमेशा ही इस प्रकार के काम केवल नाम के लिये किये जाते हैं, परन्तु ईश्वर की कृपा से अब ज़माने के ख़्यालात में इतना परिवर्तन हो गया है कि इन कामों के होने पर अब कुछ थोड़े से मूर्ख लोग तो प्रशंसा करते हैं परन्तु ज़्यादातर लोग और विशेष कर माननीय लोग इन कामों की निन्दा ही नहीं करते किन्तु उनको बड़ी घृणा से देखते हैं। अख़बारों में इन कामों के करने वालों की स्तुति आपने कभी नहीं पढ़ी होगी निन्दा ही पढ़ी होगी। परन्तु बड़ी बात तो इसमें यह है कि इस प्रकार के कामों से और रुपया फ़ज़ूल ख़र्च होने से और बेशरमी की और बदचलनी को पैदा करने वाली बातें होने से

बच्चों की गर्दन पर छुरी चलती है। जो रुपया उन के काम में आता जिससे उनकी परवरिश और तालीम ऐसे तौर पर हो सकती कि वह अपने जीवन में अपने माता पिता को धन्यवाद देते। जो रुपया न मालूम किस २ प्रकार झूंठ सच बोल कर पैदा किया जाता है उसको यों फेंक देना वास्तव में बच्चों की गर्दन पर छूरी चलाना है और आगे के वास्ते उन बेचारों के लिये बड़े खर्च का एक दस्तूर अपने कुटुम्ब में कायम कर देने से उन के लिये तकलीफ का कारण बनना है। आज घर में रुपया है कल को न जाने बच्चों की क्या दशा है। उन बेचारों को क़र्ज़ लेकर जायदाद बेच कर अपने कुटुम्ब का नाम और दस्तूर कायम रखने के लिये रुपया खर्च करना पड़ता है और इससे दूसरों के लिये एक तकलीफ का पैदा करने वाला नमूना क़ायम होता है यदि किसी के पास रूपया है तो उसको खर्च करने के तो तरीके ऐसे २ हैं कि जिनसे उपकार भी होवे और नाम की परवाह होनी तो नहीं चाहिये परन्तु वह भी आप ही आप हो ही जाता है। और आगे को कुटुम्ब पर कोई बोझ प्रतीत होने वाला दस्तूर न कायम हो। ऋषिकुल, गुरुकुल, आचार्य्यकुल, साधु उपदेशक पाठशाला, जैसा मोहनी आश्रम हरद्वार में खुलने वाला है, विद्यालय, कन्या पाठशालायें, विधवा आश्रम और विधवा पाठशालायें इत्यादि अनेक ऐसे २ काम अतिआवश्यक हैं कि उनमें रुपया खर्च करने से बड़ा उपकार हो सकता है और बच्चों के आचरणों पर

इसका कोई हानि कारक प्रभाव पड़ने के बदले अति उत्तम प्रकार के प्रभाव उससे उन पर पड़ने सम्भव हैं।

इसके साथ शादियों में लड़कों और लड़कियों पर रूपया दिया लिया जाना, बुढ़ापे में छोटी लड़कियों के साथ शादी होना, एक औरत के होते हुये दूसरी शादी करना मृत्यु के समय बड़ी २ दावतें, भूर, बखेर, बड़े २ स्यापे आदि का होना, बच्चों को जेवर पहिनाया जाना, ऐसी बातें हैं कि जो बन्द होने और घृणा की दृष्टि से देखे जाने योग्य हैं।

परन्तु इस विषय में जो बड़ी बात विचार के योग्य है वह यह है कि विवाह और मृत्यु कोई खेल तमाशा नहीं हैं। किन्तु ऐसे नादिर और अनोखे मौके हैं कि जहां लोग वाहियात बातें करके अपने और अपने बच्चों के और और २ लोगों के लिये इस लोक और परलोक के दुःख के सामान कर लेते हैं वहां शास्त्रोक्त रीति से चलने से इन अवसरों पर महान् और भारी लाभ उठाया जा सकता है और उन के करते समय और शेष जीवन में और परलोक में महा आनन्द की प्राप्ति लाभ की जासकती है। ऐसे आनन्द की प्राप्ति कि जो नाच औरऔर नापाक और फ़ज़ूल बातों को करने वाले स्वप्न में भी नहीं जान सकते और बच्चों का और अन्य पुरुषों का भी महा दर्जे का भला हो सकता है। विशेष कर विवाह एक ऐसी रस्म है कि इस की खास मन्शा सन्तान की उत्पत्ति होती है। ऐसी रस्म को अवश्यमेव इस प्रकार से करना उचित है कि ईश्वर

T

का आशीर्वाद प्राप्त हो सके-कि जिस से सन्तान जो उत्पन्न हो तो कुल को कलंक लगाने वाली न हो आप दुःख पाने वाली और संसार में दुःख फैलाने वाली न हो किन्तु कुल के नाम को प्रकाश करने वाली, आप सुखी रहने वाली और संसार को सुख पहुंचाने वाली होवे अर्थात् ईश्वर की भक्त हो.वे ऐसे समय में जैसाकि ऊपर प्रकट किया गया है भले प्रकार महा आनन्द और लाभ का देने वाला ईश्वर का स्मरण किया जाना चाहिये कि जिस से अपना और सब का भला होवे और सन्तान भी अति उत्तम प्रकार की पैदा होवे। लोग कभी २ कहा करते हैं कि बिना नाच वग़ैरा के शादियों में आनन्द या रस नहीं आता लेकिन हमने कई शादियां देखी हैं कि जो धर्म के साथ की गई। और जो पवित्र आनन्द उन में आया है उनका अनुभव स्वप्न में भी नाच वालों वगैरह को नहीं हो सकता। अमृत की वर्षा इन शादियों में होती प्रतीत हुई है। सुन्दर भजनों का गाया जाना सुन्दर व्याख्यान या विचार वगैरह होना ऐसे २ काम उन शादियों में देखे गये हैं कि उन के स्मरण मात्र से अब भी स्वर्ग का आनन्द हृदय में व्याप्त हो जाता है। परन्तु आनन्द न भी आवे तो दो दिन बिना आनन्द के ही व्यतीत कर दो। परन्तु महा पाप और महा क्लेश से बच्चों आदि को बचाओ इस बचाने का विचार ही बहुत बड़ा आनन्द पैदा कर देगा।

उधर मृत्यु जैसे बड़े संजीदा अवसर पर अपने प्यारे मृतक की मुक्ति के अर्थ ईश्वर का वही दुःख शोक हरण

महा आनन्द और लाभ दायक स्मरण करना उचित है। कैसे संजीदा अवसरों पर कैसी वाहियात और हानि कारक बातें होती हैं इस का विचार वास्तव में बड़ा दुःख दाई है। किन्तु किसी कवि ने कहा है:—

"सर पड़ी तो क्या है सर पर पिता तो है
मुशकिल अड़ी तो क्या है मुशकिल कुशा तो है"

हम अपने मुशकिल कुशा पिता की सेवा में इस समय अपने आप को समझने का, उस का आशीर्वाद मिलने का वह मधुर "माशुचः" और "प्रसन्नो भव" सुनने का अधिकार रखते हैं। वह हम को इस समय निश्चय करा रहा है कि पवित्र और अति बलवान लहरें फैल रही हैं। जल्द लोगों की बुद्धियां बदलेंगी और हमारी इच्छायें पूर्ण होंगी। हम अपना कर्तव्य दृढ़ता और विश्वास के साथ किये जावें और उन को वह पिता अवश्यमेव सफल करेगा और न केवल विवाह आदि के किन्तु हर प्रकार के सम्बंध में हमारा सच्चा सुख और कल्याण होवेगा।

दान धर्म

अब मैं आप का ध्यान दान धर्म की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। हमारा देश, हमारी हिन्दू कौम, और हमारी वैश्य जाति दान के लिये प्रसिद्ध है किसी और देश में इतना दान नहीं होता होगा जितना हमारे देश में, और हमारे देश की किसी कौम में हिन्दुओं से जियादा और शायद किसी जाति में वैश्य जाति से बढ़ कर दान नहीं होता होगा। परन्तु इस दान का शतांश

भी यदि शास्त्रोक्त रीति से होवे तो देश की दशा में एक बहुत ही सुन्दर और बड़ा परिवर्तन हो जावे। बहुत हालतों में तो दान ऐसे तौर पर होता है कि उस से बड़ी हानि होती है। उस दान से दान का न होना हज़ार दर्जे अच्छा है। शास्त्रों में लिखा है कि—

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्विकंस्मृतम्॥

भ० गी० अ० १७। २०

अर्थात् जो दान देश काल और पात्र को देख कर निष्काम भाव के साथ दिया जावे वही सात्विक दान है।

इस सम्बंध में कई बातें विचारने योग्य हैं उन में से एक यह है। जो धन किसी मनुष्य के पास है वह ईश्वर की अमानत है उसका वह ईश्वर की ओर से मानो ख़ज़ाञ्ची है। यदि ख़ज़ाञ्ची धनी की अमानत को ख़र्च करने की जगह तो ख़र्च करे नहीं। और जहां खर्च न करना हो वहां ख़र्च करदे तो उसकी खजाञ्ची गिरी छिन जावेगी। इसी प्रकार यदि कोई धनवान मनुष्य धन को ऐसे प्रकार खर्च करे कि जो ईश्वर की आज्ञा के विरुद्ध हो और ऐसी जगह खर्च न करें जहां ईश्वर की आज्ञा हो तो क्या फिर भी वह ख़ज़ाञ्चीबनाया जासकेगा? आगे फिर भी धनवान बनने के लिये आवश्यक है कि इस समय धन को यथार्थ रीति से व्यय करें कुपात्र आदि को दान देने से और यथाशक्ति उचित प्रकार सुपात्र आदि को दान न देने से कोई मनुष्य आगे को धनवान बनने

की आशा रखने का अधिकारी नहीं है। कुपात्रों को दान देने में महा पाप की एक बात यह भी है कि सुपात्रः का हक़ मारा जाता है। आज कल ऐसे सदा वर्तों आदि ने कि जिन में पात्र कुपात्र को देखे बिना अन्नादि दिया जाता है बावन लाख आदमियों को साधू बना दिया है भला क्या यह सब सच्चे साधु हैं? बावन लाख तो क्या बावन हजार या बावन सौ भी इन में सच्चे साधू नहीं हैं। और इसी प्रकार के दान आदि ने बहुत से तीर्थों के पंडो और अन्य ब्राह्मणों को विद्या हीन और तीन करोड़ भारत वासियों को भिखारी बना दिया है क्या यह सब सच्चे ब्राह्मण हैं? ईश्वर न करे कि मैं अपने पूजनीय साधुओं और ब्राह्मणों की निन्दा करूं कि जिन में बड़े२ महाशय सच्चे महात्मा साधू और ब्राह्मण हैं जिन का जीवन निहायत परोपकार का जीवन है जो अपने सत उपदेशों और अमृत बाणी और अपने पाक नमुने से संसार को बड़ा लाभ पहुंचा रहे हैं। साधु नाम के अधिकारी यही महा पुरुष हैं। और गृहस्थी लोग जिम्मेदार हैं कि इन की जरूरतों को पूरा करें उनको अन्न वस्त्र आदि का दान देना उन पर कोई अहसान करना नहीं है उनका एक२ उपदेश बड़ा अमूल्य होता है और उनको लाखों रुपया भी उस के बदले में दिया जावे तो हमारे ही जिम्मे उनका अहसान बाकी रहता है। उनके ऊपर हमारा अहसान नहीं होता है। ऐसे साधुओं को दान देना अपने आप को कृतार्थ करना है। और उनका यथोचित दान न देना पाप है। इसी शैलो में दान पात्र ब्राह्मणों को भी समझलो परन्तु लाखों

आदमी ऐसे हैं कि जो कमाने में आलस्य या और किसी ऐसे ही कारण से अधेले के गेरु में कपड़े रंग कर साधु बन गये मुफ्त की रोटियां खाने को और कपड़े पहनने को मिलें लोग बड़ा आदर सत्कार करें। कुछ करने धरने का फ़िक्र नहीं जहां चाहें वहां सैर करते फिरें। तो जबकि गृहस्थी लोग अपनी रोटी कमाने में इतना बड़ा कष्ट उठाते हैं बड़े पाप के काम भी कभी २ कर बैठते हैं और फिर भी बहुत बार उन को पेट भर रोटी नहीं मिलती है। तो आश्चर्य यह है कि बावन लाख की जगह कई करोड़ आदमी साधु क्यों नहीं बन गये। यहां यह भी याद रखने की बात है कि भारत वर्ष में बावन लाख तो साधु ही साधू हैं बेचारे गृहस्थियों की कमाई को मांग कर खाना ही जिन का पेशा है ऐसे कई करोड़ और भी ब्राह्मण भाट आदि हैं इन सब में से मोटा हिसाब लगाने को हम पचास लाख से उपर के आदमियों को तो साधु समझ लेवें और ब्राह्मण अर्थात् दान के पात्र समझ लेवें और शेष साधु ब्राह्मण आदि नाम रखा दूसरों के सिर खाने वालों को पचास लाख ही करार दें तो सोचने की बात है कि कितना रुपया देश का साल भर में यह लोग खा जाते हैं यदि इन लोगों को खाने कपड़े कुटिया यात्रा आदि सब हिसाब लगा कर कम से कम एक एक का ५) रुपये मासिक या ६०) रुपये सालाना भी खर्च समझा जावे तो तीस करोड़ रुपया साल बैठता है कि जो छोटी रकम नहीं है। एक आदमी कहा करता है कि यदि दैव गति से यह पचास लाख आदमी मर जावें तो तीस करोड़ रुपये

साल की बचत तो एक हो जावे। और जो अन्न यह लोग खाते हैं उस की बचत होने से अन्न सस्ता होने के कारण गरीब गृहस्थियों को कुछ सुभीता हो जावे। परन्तु यह भारत माता के पुत्र मर क्यों जावें ? क्यों न यह मांगना छोड़ कर सोसाईटी के उपयोगी मेम्बर बन जायें ? यदि यह लोग मांग कर खाना छोड़ देवें और मरें नहीं किन्तु जीते रह कर काम करें तो अपने आप चाहे उन की कमाई की औसत साठ रुपये साल से अधिक न हो। किन्तु जो काम यह करें उस काम की कीमत दो सौ रुपये सालाना फी आदमी क़रार दी जावे तो एक अरब रुपये का लाभ प्रति वर्ष देश को इन से पहुंचे। इस में से तीस करोड़ रुपया इन के खर्च का काट कर सत्तर करोड़ का नफा प्रति वर्ष देश को इन से पहुंचे। इस इतने बड़े लाभ को रोकने और इस ऐसी बड़ी हानि को पहुंचाने के जिम्मेदार कौन हैं ? क्या वही लोग नहीं जो बिना विचार पात्र कुपात्र को सदावर्तों आदि में अन्न वस्त्र आदि का दान करते हैं ? यदि पात्रों को ही दान मिला करे तो फिर यह पचास लाख आदमी साधु क्यों होवें ? यह भी कमा कर खाया करें और देश को सत्तर करोड़ रुपया प्रति वर्ष का सूद के अलावा लाभ पहुंचा करे। इतना बड़ा लाभ तो केवल दान के बन्द होने से हो जाया करे और यदि यह दान या उस का कोई माकूल हिस्सा और इस के अलावा उस दान का माकूल हिस्सा कि जो और भी हमारे देश में होता है यदि यह शास्त्रोक्त धर्म के कामों में लगाया जावे तो क्या भारत वर्ष ऐसी ही दशा में दीख पड़े जैसाकि

अब ? ओह ! कितना बड़ा लाभ देश को पहुंचना सम्भव है। चाहे जितने ऋषिकुल और विश्वविद्यालय चाहे जितने विशुद्धानन्द महा विद्यालय चाहे जितनी युनीवर्सिटी चाहे जितने विधवा आश्रम, कन्या पाठशालायें अनाथालय, गौशालायें आदि कायम करलो चाहे जितने गरीब लोगों की तकलीफ दूर करने के सामान कर लो।

एक शंका जो लोग किया करते हैं यहां पर उस के विषय में कुछ निवेदन कर देना उचित प्रतीत होता है। लोग कहा करते हैं कि भूखा चाहे कोई हो उसको अन्न देना उचित ही है मैं कहूंगा "अवश्यमेव" परन्तु उसका मतलब यह है कि यदि कोई मनुष्य कभी इत्तफाक़िया भूखा आवे तो उसको अन्न अवश्य दिया जावे। चाहे वह कोई हो परन्तु जो मांग कर खाना ही अपना पेशा बना लेवे उसको रोज २ अन्न देना अनुचित है इससे उसका जीवन निकम्मा होजाता है और देश को हानि होती है और दूसरों का हक उसको मिलना भी पाप ही की बात है। मित्रों ! युरूप, अमेरिका आदि का तो मैं क्या आप के रुबरु वर्णन करूं आप अपने ही देश में देखिये हमारे मुसलमान भाई कितने हैं और धन में हिन्दुओं की अपेक्षा बहुत कम हैं परन्तु उनके कितने कालिज और पाठशालायें बनी हुई हैं आर्य समाजियों को देखिये वह भी इतने थोड़े और धन में कम हैं। परन्तु उनके कितने गुरू कुल और पाठशालायें और कालिज हैं। इधर हिन्दुओं की ओर दृष्टि डालिये बहुत सारी ऐसी संस्कृत पाठशालायें हैं कि

जहां पढ़कर बेचारे विद्यार्थी किसी योग्य भी नहीं होते या नहीं रहते हैं कितने थोड़े कालिज और पाठशालायें हैं और फिर उन में मुसलमानों के अलीगढ़ कालिज और आर्य समाजियों के कांगड़ी गुरुकुल और लाहौर के डी० ए० बी० कालिज के मुकाबले का हम नाम भी नहीं लेसकते हैं। क्या हमारा हरद्वार का ऋषिकुल और बनारस का हिन्दू सेन्ट्रल कालिज और विशुद्धानन्द महाविद्यालय और कुछ कम हैसियत के और दो चार स्कूल या कालिज या ऋषिकुल इतनी बड़ी हिन्दू जाति को ऊपर उठाने और शिक्षा देने के लिये काफी हैं? फिर हमारी वैश्य जाति ही में जो काम जैसे अनाथालय मेरठ, और बिधवा आश्रम मेरठ, नाईट स्कूल मेरठ, बोर्डिंग हाउस आगरा और और कई एक काम महा उपकार के हो रहे हैं और और इसी प्रकार के सैकड़ों और होने की आवश्यकता है जिन में से इंगलेन्ड अमेरिका आदि में वैष्णव धर्म के आश्रम हिन्दुओं के नहीं तो वैश्यों के लिये कायम करना एक है। फिर हिन्दू सभा को स्थापन और दृढ़ करना जबकि और कौमें मुसलिम लीग आदि की तरह अपना काम कर रही हैं, क्या इन सब का पेट भर चुका है? क्या इन की रात दिन की पुकार रुपयों की आवश्यकता के बिषय में बन्द होगई है, जो हमारा दान ऐसी बे पर-वाही के साथ होवे कि उस से हानि पहुंचे और दान करने वालों को पाप होवे? मेरे एक मारवाड़ी मित्र ने एक बार मुझ को सुनाया कि मारवाड़ में एक स्थान है जहां के रहने वालों को पानी बदून बहुत तंगी थी एक सेठ

ने वहां एक बावड़ी या सीढ़ीदार कुवां बनवा दिया जिस से लोगों को बहुत ही बड़ा सुख पहुंचा और उस सेठ का बड़ा नाम हो गया। इस पर एक दूसरे सेठ ने दूसरा वैसा ही कुंवां बनवा दिया इससे भी सुख पहुंचा और उस दूसरे सेठ का भी नाम हो गया। इसके पश्चात एक तीसरे ने फिर एक चौथे ने और फिर पांचवें ने और छटे ने नाम के लिये धर्म खाते का या ईश्वर के बखरे का रुपया ख़र्च करके कुएं बनवा दिये। परिणाम यह हुआ कि आबादी थोड़ी थी। कुओं में से पानी का निकास काफ़ी नहीं हुआ, पानी सब कुओं का सड़ने लगा और लोगों का आराम जाता रहा बतलाइये तो सही यह इन फालतू कुएं बनाने वालों ने पुण्य कमाया या पाप? क्या मारवाड़ में कोई ऐसी और जगह ऐसी बाकी नहीं रही थी कि जहां इस के बदले अलग २ कूवां यह लोग बनवा देते? बहुत लोगों के यहां धर्म खाते में या ठाकुर जी के बखरें के खाते में जो नफे में से प्रति वर्ष रुपया जमा होता है उसको ऐसी बे परवाही से ख़र्च किया जाता है कि उसका बिलकुल भी दर्द उन के दिल में नहीं होता है। अपना एक पैसा यदि वेजा खर्च हो जावे तो उसका तो उनको दुःख होता है परन्तु धर्म के या ठाकुर जी के रुपये की बाबत् उनको कुछ परवाह नहीं होती है। क्या यह जिम्मेवरी की बात नहीं है? अपने पैसे से जियादा धर्म के और ठाकुर जी के रुपये की परवाह और खबर दारी होनी चाहिये।

दान विषय में मेरी राय यह भी है कि दान वित्त समान और श्रद्धा और प्रेम और प्रसन्नता के साथ और

निष्काम भाव के साथ स्वार्थ रहित होकर करना चाहिये। कोई २ पुरुष स्वार्थ वश होकर नाम के लिये या अपने कुटुम्ब के रिवाज के कारण या परलोक आदि के सुख के लिये दान करते हैं। और कभी कभी बित्त से बाहर दान करते हैं यह सब पाप है। जो रुपया वह इस प्रकार दान करते हैं वह उन का नहीं है उस में उनके बाल बच्चों का भी हक है और अपने बाल बच्चों का हक अपने स्वार्थ वश इस प्रकार लुटाना उन का गला काटना है कि जो महा पाप है।

इस में संदेह नहीं है कि दान की वर्तमान दशा हमारे देश को बहुत शोचनीय है और उस का सुधार होना उचित ही है। परन्तु साधारण बातें जिन की ओर लोग ध्यान दिया करते हैं वह बहुत छोटी हैं। वर्ण व्यवस्था जो शास्त्रों में बतलाई गई है उस से चारों वर्णों के काम इस प्रकार बांट दिये गये हैं कि जिस से सब को सुख पहुंचे। इस वर्ण व्यवस्था के धर्मों पर विचार करने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि केवल साधु सन्यासियों का ही जीवन परोपकार के लिये नहीं है किन्तु गृहस्थ आश्रम के एक एक व्यक्ति का जीवन अपने वास्ते नहीं किन्तु महान् उद्देश प्रत्येक मनुष्य के जीवन का रक्खा गया है। जहां ब्राह्मण का धर्म विद्या और ज्ञान देना, क्षत्री का धर्म प्रजा का प्रबंध, रक्षा आदि का रखना, शूद्र का धर्म अपने तन से सेवा करना बतलाया गया है कि जो वास्तव में परोपकार के काम हैं। वहां बेचारे वैश्य को एक कठिन धर्म बतलाया गया है अर्थात् धन आदि संचय करना इस

में लोभ से मन को बचाना एक कठिन काम है। वैश्य का धर्म है धन आदि सचय करके तीनों वर्णों के गुज़ारे का प्रबंध करना, केवल उस के लिये वह धन नहीं है, जो धन एक वैश्य कमाता है वह उस का नहीं है किन्तु उसके और औरों के गुजारे के लिये है। यह संसार एक कुटुम्ब माना गया है। एक परिवार में किसी का काम घर की रक्षा करना, किसी स्त्री आदि का काम भोजन आदि बनाना है, और किसी का काम धन कमाना है, परन्तु जो धन कमाने वाला कमाई करता है वह केवल उस की नहीं है किन्तु सारे परिवार की है और परिवार में जिस २ के लिये जो २ आवश्यकता होती है वह उस धन से पूरी होती हैं परन्तु क्या इस प्रकार आवश्यकता पूरी करने में धन कमाने वाले का कोई अहसान है ? नहीं वह बड़े प्रेम के साथ उन आवश्यकताओं को पूरा करता है और बड़ा आनन्द मानता है। इसी प्रकार संसार रूपी परिवार में वैश्य का काम यदि धन कमाने का है तो जो धन वह कमाता है वह उस का नहीं है किन्तु सारे परिवार का है। जहां २ आवश्यकता होवे वहां प्रेम भाव के साथ आनन्द में भर कर वह खर्च होना चाहिये पुण्य का खयाल और अहसान का खयाल करना बहुत छोटा खयाल है। सोचते हैं आप–कि जिनको आप दान देते हैं वह कौन हैं ? जैसाकि मैं पहिले कह आया हूं याद रक्खो कि "नूरे नज़र वह भी किसी ताज दार के" वह ईश्वर के पुत्र हैं जिस का अहसान तुम्हारे ऊपर इतना बड़ा है कि यदि उस के बच्चों को कुछ तुमने दे दिया तो तुम ने कुछ भी

T

बदला नहीं उतारा। फिर यह भी याद रहे कि यह वह बच्चे हैं कि जिनके अन्दर से निकली हुई लहरें या किरणें प्रतिक्षण पूर्वोक्त प्रकार तुम को और तुम्हारे परिवार को निहाल कर रही हैं। अरे! अपने अहो भाग्य समझो कि ऐसे ईश्वर से भी बड़ों की सेवा करने का तुम को अवसर मिलता है। आनन्द में भर कर दो और खूब कमाओ तुम्हारा काम है कमाना और उन की सेवा करना। किस की सेवा करना? क्या मैंने यह कहा है कि वह ईश्वर के बच्चे हैं हां खैर यह भी समझलो बल्कि इस के साथ बिना सकोच और जरूर यह भी समझो कि तुम उनकी सेवा करने में ईश्वर अपने प्यारे पिता को प्रसन्न कर रहे हो इस में सन्देह नहीं होसकता है कि कोई आदमी अपनी सेवा के होने पर इतना प्रसन्न नहीं होता है जितना अपने बच्चों की सेवा होने पर

परन्तु यह बात भी इतनी आनन्द की देने वाली और जो आनन्द के फल हैं उनको प्राप्त कराने वाली नहीं है। जब कभी किसी की सेवा तन से, मन से, धन से, बाणी आदि से करो तो आप को बहुत जियादा आनन्द आवेगा और ईश्वर की प्रसन्नता भी उसमें बहुत जियादा आप को प्रतीत होवेगी। यदि आप बड़ों को माता पिता समझ कर, बराबर वालों को भाई बहिन समझ कर, और छोटों को बेटा बेटी समझ कर प्रेम भाव के साथ सेवा करें - यह मैं अपने अनुभव की बात कहता हूं मुझ को कितना बड़ा आनन्द आता है कि जब कभी मैं किसी

T

को कोई पैसा टका यह समझ कर देता हूं या यूं कहिये कि यह समझ कर भेंट करता हूं कि आयु के विचार से यह मेरा पिता, या माता, या भाई, या बहिन, या बेटा, या बेटी है। उससे हृदय आकाश में से भी मानो एक आकाश वाणी आती है। पूर्वोक्त प्रकार ईश्वर कहता हुआ प्रतीत होता है कि मैं धन्य हूं कि मेरे ऐसे पुत्र हैं कि जो ऐसा भाव अपने मन में रखते हैं। हां मित्रों हमारे शास्त्रों में निष्काम ही कर्मों का महात्म लिखा है कामना के साथ जो काम किये जावें चाहे वह दुनिया के नज़दीक अच्छे भी हों और चाहे उनसे उपकार भी दूसरों का हो जावे परंतु दीर्घ दृष्टि से देखने पर वह पाप ही प्रतीत होवेंगे। जैसा कि एक चोर कामना वश चोरी करता है, डाकू डाका मारता है, वैसा ही कामना वश एक दुकानदार दुकान करता है, एक साधु अपनी मुक्ति के लालच में आया हुआ माला फेरता है, एक दानी दान देता है, हमारे सनातन धर्म में एक कैसा पवित्र दस्तूर है कि जब कोई सनातन धर्मी कोई काम करता है तो वह पहिले संकल्प पढ़ता है वह अपने हृदय में यह विचार कर लेता है कि मैं इस काम को किस अभिप्राय के साथ करता हूं। हमारा स्नान, ध्यान, पूजा पाठ, दान, पुण्य आदि ही नहीं किन्तु हमारे सारे ही काम छोटे से छोटे और बड़े से बड़े हमारा लेन देन कार व्यवहार, खेती, दुकान, आदि सब काम हमारा खाना, पीना, सोना, जागना, आदि यहां तक, कि हमारा सांस लेना तक जिस अभिप्राय को लेकर होना चाहिये

T

उसको कैसी सुन्दरता के साथ एक श्लोक में वर्णन किया है कि जिसको प्रातः स्मरण कहते हैं वह श्लोक यह है:—

लोकेश चैतन्यमयाधिदेव,
मांगल्य विष्णो भवदाज्ञयैव ।
हिताय लोकस्य तव प्रियार्थं,
संसार यात्रा मनु वर्तयिष्ये ॥१॥

अर्थात्–प्रातः काल में हम प्रेम भाव में भरे हुए एक ऐसा दृश्य पेश करें कि हम जो ईश्वर के बच्चे हैं उस अपने पिता के सन्मुख अति उत्तम प्रशंसा के मधुर शब्दों के साथ अपने जीवन के महान् अति उत्तम उद्देश को प्रकट करते हुए दिखाई दें अर्थात् हम ईश्वर से कहते हुए प्रतीत हों कि हे संसार के मालिक चैतन्य मय, हे मंगल स्वरूप हमारे सर्व व्यापक पिता जी हम किसी और ग़र्ज़ से नहीं बल्कि केवल इस लिये कि यह आप की आज्ञा है, और संसार के हित के लिये और आप की प्रसन्नता के लिये अपनी संसार की यात्रा का अनु वर्तन करते हैं अर्थात् अपने सारे कामों को इन उद्देश्यों के साथ करते हैं।

कैसा आनन्द तो ऐसे शब्द अपने पिता से कहने में हमको अनुभव होना सम्भव है! और कैसा आनन्द इस विश्वास में होना सम्भव है कि वह महान् परमात्मा अपने बच्चों के मुख से ऐसी प्रशन्सा के शब्द और ऐसे प्रेम और पवित्र भाव और संकल्पों को प्रकट करने वाले शब्द सुन कर कैसी महान् प्रसन्नता को प्राप्त हो सकता

है ! और कैसे कुछ उसके आशीर्वाद के पात्र हम अ
आप को उस समय समझ सकते हैं ! और इस आन
के जो फल पूर्वोक्त प्रकार होते हैं उनको भी याद क
कैसी प्रसन्नता हमको होनी सम्भव है ! और फिर अपने का
को हम ऐसे भावों और संकल्पों के साथ करें तो उन
फल हमको उन महाशयों से कम मिलेगा क्या ? कि
कामना के साथ अपने कामों को करते हैं--नहीं, का
कार्य्य के नियमानुसार हम को उन कर्मों का फल
मिलेगा और यह महा आनन्द और इस आनन्द का
कि जो स्वर्ग के समान है वह रूङ्गा में मिलजाता है
कामना और लालच के दोष से हम पाक समझे जाते
ओह ! कैसे सुन्दर नियम हैं सृष्टि के ! बधाईयां मनु
जाति तुझ को बधाईयां ! इस प्रकार कर्म किये हुये कै
सफलता लाने वाले और उन के करने में कितना आन
होता है और क्या २ सुन्दर प्रकार की आकाश वाणि
हृदय आकाश से आती हुई इन कामों के करते हुये प्रत
होती हैं और किसी कार्य्य में सफलता न होने की द
में मनुष्य को कैसी अपनी निर्दोषता प्रतीत होती
किस की सामर्थ है कि उसको बर्णन कर सके एक श्लोक है

अहार निद्रा भय मैथुनंच
सामान्य मे तत् पशुभिर्नराणाम् ॥
धर्मो हितेषा मधिको विशेष:
धर्मेण हीना पशुभिर्समाना

जिसका यह अर्थ है:- खाना, सोना, भय करना, मै
इत्यादि, बातें पशुओं में और मनुष्यों में एक समान हो

हैं। मनुष्य में एक धर्म ही विशेष है और धर्म न हो तो यह पशु के समान है यह सर्वथा सत्य है बल्कि पशु अपनी जिम्मेदारी को न समझने के कारण किसी बुरे काम के लिये जिम्मेदार और दूषित नहीं ठहर सकता है—और मनुष्य ठहर सकता है—परन्तु एक भक्त का ईश्वर अपने पिता की आज्ञा समझ कर और संसार के हितार्थ खाना, पीना, सोना, इत्यादि बड़े आनन्द दायक और बड़े सफल समझे जाने के योग्य काम हैं कोई मनुष्य फल की कामना रखता हुआ लाखों रुपये दान करे और एक भक्त ईश्वर के और संसार के प्रेम के कारण ईश्वर की आज्ञा समझ कर और संसार का हित समझ कर अपना भोजन करे या सो जावे या अपना संसारिक व्यवहार करे तो उसका भोजन करना या सो रहना या व्यवहार करना ईश्वर को अधिक प्रसन्न करने वाला और अधिक प्रशंसा के योग्य और धर्म का काम और अधिक फल संसार में लाने का कारण समझा जावेगा, उस दान करने वाले के दान से, मित्रगण आपके चरणों के आशीर्वाद से इस प्रकार के विचार मन में लाकर काम करने की कोशिश करता हूं। और जो आनंद मुझ को आता है उसको मैं ही जानता हूं। और हानि जो मुझको इससे सम्भव है उसको आप बतला दीजिये।

सज्जन गण यदि उसी छोटी सी क्रिया से जिस का नाम छोटी संध्या रक्खा गया है। काम लिया जावे, तो ईश्वर से प्रेम भाव और निष्कामपन और नजाने क्या २ बातें मनुष्य के अन्दर विकाशित हो जानी सम्भव हैं।

ईश्वर की कृपा से जो कुछ कि आप जैसे महात्माओं के इस प्रकार के भावों से अब भी देखने में आता है वह बहुत बड़े धन्यवाद के योग्य है। कैसी प्रसन्नता हम को होती है जब हम दृष्टि डालते हैं उस सुन्दर परिवर्तन पर कि जो हमारे प्यारे मित्रों मारवाड़ियों के अन्दर इस दान के विषय में हुआ है। भला कहां तो उन की उस प्रकार की बातें कि जहां एक या दो कुयें सुख पहुंचा रहे थे-वहां कई और बना कर जल का निकास काफ़ीन होने के कारण सारे ही बिगड़ गये। और कहां इन का ऋषिकुल हरिद्वार की इस प्रकार सहायता करना, और विशुद्धानन्द महा विद्यालय के लिये इस प्रकार कोशिश करना, यह नमूने के लिये आप से निवेदन किया है और इस को भी मैं आप जैसे महाशयों के शुभ भावों ही का फल समझता हूं कि हरिद्वार में हमारे स्वर्ग वासी राय साहिब आनरेबिल लाला निहाल चन्द साहिब रईस मुज़फ़्फ़र नगर ने एक दान धर्म प्रचारिणी सभा स्थापित की थी कि जिसका काम बड़े उत्साह के साथ उन के सुपुत्र श्रीमान् आनरेबिल बाबू सुखबीर सिंह जी और उन के सुयोग्य भाई कर रहे हैं। मित्रो विचार और विश्वास कहता है कि दूर नहीं है वह समय कि जब हमारे देश की दान प्रणाली ऐसी सुधरी हुई दीख पड़ेगी कि प्रत्येक मनुष्य अपने वित्त के समान प्रेम और आनन्द और शुभ और पवित्र भावों से भर कर निष्कामपन के साथ आवश्यक अवसरों पर दान देगा जिस से देश ही को नहीं किन्तु सारे संसार को बड़ा लाभ पहुंचेगा।

T

इस सम्बन्ध में इतना और निवेदन कर देना आवश्यक समझता हूं कि धनवान लोग तो दान कर सकते हैं बेचारे निर्धन क्या इस धर्म से विमुख ही रहेंगे ? नहीं बड़े २ आदमी जो लाखों रुपया दान करते हैं वह रुपया अपनी पाकिट में तो रखते ही नहीं कि जो निकाल कर देदें, वह अपने खज़ान्ची को जबानी या चिक आदि द्वारा हुक्म देदेते हैं और दान हो जाता है परन्तु निर्धन और धनवान दोनों ही एक बहुत बड़ा दान करने के अधिकारी हैं। यदि वह जैसा कि पहिले भी कहा गया है अपने ख़ज़ान्ची को नहीं अपने पिता परमात्मा को वही शब्द कह दें अर्थात् "पिता जी सब आप के भक्त बन जायें" तो उन की जबान हिलाने बल्कि मन के विचार मात्र से परमात्मा कारण कार्य्य के नियमानुसार वह फल पैदा कर देते हैं कि रुपये से वह कदापि नहीं हो सकते हैं जो कोई इस दान को करे कि जो इस छोटी संध्या द्वारा ऐसी सुगमता से होना सम्भव है तो निश्चय है कि वह वित्त समान पात्र कुपात्र को विचार कर अवश्यमेव दान करेगा।

व्यवहारादि ।

अब मैं वैश्य जाति के जो सांसारिक धर्म हैं उनकी ओर कान फूंस का ध्यान चन्द मिन्टों के लिये दिलाने की आज्ञा चाहता हूं शास्त्र में वैश्यों के धर्म इस श्लोक में वर्णन किये गये हैं:—

कृषि, गोरक्ष, बाणिज्यं
वैश्य धर्म स्वभावजम्

अर्थात्—खेती, गोरक्षा और बणज यह वैश्य जाति के

धर्म बतलाये गये हैं। अर्थात् जो कोई वैश्य इन कामों में से एक या ज्यादा को करके देश के धन को शेष तीनों बर्णों के गुज़ारे के लिये न बढ़ावे तो वह अपने धर्म से पतित हो जाता है या पापी बन जाता है कोई २ लोग कहा करते हैं कि धन का कमाना या संसार के काम करना पाप है। परन्तु ऐसा कहना शास्त्रों की शिक्षा के विरुद्ध है। और विचार कर देखा जावे तो शास्त्रों की शिक्षा जैसा कि और सब विषयों में है ऐसे ही इस बिषय में भी परम माननीय है। ज़रा ध्यान तो दीजिये। इन कामों से कितना लाभ संसार को पहुंचता है कृषि कर्म से अन्न आदि पैदा होते हैं कि जिनसे दुनिया पलती है। क्या यह छोटे उपकार का काम है। दुकानदार लोग कहीं २ से बड़े यत्नों और परिश्रमों से माल मंगाकर और उसको खास तौर पर तैयार करके या कराके कितनी सुगमता लोगों के लिये पैदा कर देते हैं। क्या यह छोटे उपकार की बात है? महारानी विक्टोरिया और महाराज एड-वर्ड के स्वर्ग वास पर केवल चन्द घन्टों के लिये बाज़ार बन्द हुये थे। क्या दुःख लोगों को इस थोड़ी देर में पहुंच गया? रुपया तो उनके पास था। परन्तु रूपये को वह न खा सकते थे और न पहिन सकते थे और न किसी और काम में लगा सकते थे। आखिर जब दुकानें खुलीं तब उन दुकानदारों ही की बदौलत उनको रुपये के बदले में उनके सुख का सामान मिल सका। क्या दुकानदार का काम परोपकार का काम नहीं? क्या चमार और मेहतर तक का काम परोपकार का काम

नहीं ? कदापि यह नहीं सोचना चाहिये। कि दुनिया के काम करना अधर्म है। किसी का वचन है। "Work is worship" अर्थात् (काम करना पूजा है)' और एक और वचन है (तन से काम और मन से राम) इस विचार को मन में लाकर मैं अपने यहां के राज मजदूरों और सोदा बेचने वालों और सौदा खरीदने वालों और किसानों आदि को कहा करता हूं कि अपने तन से काम करते रहो और मन में ईश्वर अपने परम पिता से बातें करते रहो। तुम अपने दिल में कहते रहो कि "पिता जी सब आपके भक्त बन जायें" और विश्वास से सोचते रहो कि ईश्वर तुम को "ओंभूः ओंभूः" कह रहे हैं। तब तुम्हारा जीवन मामूली साधुवों से बेहतर हो जावेगा क्योंकि साधुवों के समान मन से तुम भी भजन करते रहोगे। परन्तु जबकि इन मामूली साधुवों का तन कुछ उपकार का काम न करता होगा तुम्हारे तन से ईश्वर के बच्चों के बड़े २ सुख के काम मिसल अन्न पैदा करना मकान बनाना। सौदे के द्वारा और सौदे के दामों द्वारा अमृत देना इत्यादि होंगे और तुम को विश्वास करने का अवसर प्राप्त होगा कि ईश्वर तुम्हारे तन के काम से भी अनन्त प्रसन्न होते हैं जब तुम अपनी रोटी खाने बैठोगे तो तुम को यह सोच कर अति प्रसन्न होने का अधिकार होगा कि तुम्हारी रोटी दूसरों के उपकार के काम करके प्राप्त होती है। और इस प्रसन्नता से बिचारे साधारण प्रकार के साधु बिहीन रहेंगे। हां वह साधु कि जो अपने

उपदेश और शिक्षा आदि से महा उपकार संसार का करते हैं। अर्थात् अपने तन से दूसरों का भला करते हैं। और मन से भजन और शुद्ध शिक्षा आदि का काम लेते हैं। उन की प्रशंसा भला कौन कर सकता है!

हां प्यारे ईश्वर के बच्चो! दुनियादारो, तुम्हारा यह हक़ है कि अपना काम करते हुये समझ कर आनन्द उड़ाओ कि जब तुम अपना काम करते हो तो स्वर्ग से फूलों की बर्षा होती है और स्वर्ग में आनन्द के गीत गाये जाते हैं। हां प्यारे! तुम ईश्वर के पुत्र और नन्दन हो तुम्हारा हक़ है कि जिस प्रकार महाराज मर्यादा पुरूषोत्तम श्री रघुनाथ जी के आने पर बड़े आनन्द और चाव में स्त्रियां एक दूसरी से कहती थीं:—

चलो सखी दर्शन करलें
रथ में रघुनन्दन आवत हैं।

उसी प्रकार स्वर्ग में तुम्हारे हर समय के काम को तुम्हारे हर समय की लीला को कि जो उन महान् आत्माओं की दृष्टि में बड़ी प्यारी प्रतीत होती है स्वर्ग निवासी लोग बड़े चाव के साथ एक दूसरे को देखने के लिये कहते हैं अपना काम निष्काम और प्रेम और भक्ति भाव के साथ करते हुये ईश्वर के आशीर्वाद के और सारे संसार के आशीर्वाद के पात्र बने हुये स्वर्ग के निवासियों की दृष्टि में तुम अनन्त प्यारे दीख पड़ते हो—विचार करने पर बुद्धि बड़े स्पष्ट प्रकार से इस बात की साक्षी देवेगी और जितना पूर्वोक्त प्रकार से विचार से काम लेकर आनन्द लिया

जावेगा उतनी ही सफलता और बरकत इन कामों से होवेगी और आनन्द के और फल रहे सो अलग।

परन्तु इन कामों को करते हुए इस प्रकार के बिचार और उसका आनन्द तबही आसकता है कि जब यह सत्य और ईमानदारी ही के साथ नहीं किन्तु प्रेम और निष्काम भाव और शुद्ध संकल्प के साथ ईश्वर की आज्ञा पालनार्थ और संसार की सेवा के निमित्त किये जावें और यदि वही छोटी सन्ध्या का प्रयोग किया जावे तो आवश्यक बुद्धि और हृदय की पवित्रता और आत्मिक बल इत्यादि अनेक गुण मनुष्य के अन्दर बहुत जल्द आजाने बहुत सुगम है, कि जिन से यह सब बातें होसकेंगी मैं फिर आप को बधाईयां देता हुआ कहता हूं कि विश्वास कह रहा है कि आप के भाव प्रति क्षण संसार में बड़ा परिवर्तन पैदा कर रहे हैं ईश्वर का आशीर्वाद आप के भावों पर है और मेरा मन तो यह कहता है कि समीप है वह समय कि जब सब जातियां अपने २ काम शुद्ध या शिव या मंगल संकल्पों के साथ भक्तों की तरह करेंगी और हमारी वैश्य जाति विशेष कर इस अति उत्तम राज्य में कि जो ईश्वर के इन्तज़ाम से हमारे देश में वर्तमान है जिस के समान अपने २ काम करने और अपने २ धर्म के पालन की सुगमता कम से कम बहुत काल से किसी राज्य में भारत वर्ष को नसीब नहीं हुई और जिस के लिये हम ईश्वर को जितना धन्यवाद देवें थोड़ा है। इस बड़ी बुद्धिमान कौम अर्थात् अंग्रेजों से शिक्षा लेकर उनके नमूनों को देखकर अपने कामों को करेगी। हमको

T

इसके चिन्ह अब भी बहुत कुछ दिखाई दे रहे हैं - हमारे देश के लोग कृषी के संबंध में पश्चिम और पूर्व की विद्याओं में ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश कर रहे हैं पशु पालन की ओर भी हमारा ध्यान खिंचा हुआ है। देश के धन की रक्षा के निमित्त स्वदेशी वस्तुओं के बर्ताव का ख़याल लोगों के हृदयों में बढ़ता जाता है और शिल्प विद्या इनजिनियरिंग इत्यादि के काम सीखने की ओर भी लोग बराबर आकर्षित होते जाते हैं। कंपनी और बैंक आदि भी हमारे देश में उन्नति पा रहे हैं और विशेष कर हमारे मारवाड़ी भाई तिजारत के काम में उन्नति कर रहे हैं सच तो यह है कि यही लोग वैश्य धर्म का पालन कर रहे हैं और यह बहुत ही बड़े धन्यवाद के पात्र हैं सारा देश ज़बाने हाल से कह रहा है कि इन हमारे प्यारों की जय रहे।

इस सम्बन्ध में यह भी निवेदन करना उचित प्रतीत होता है कि हड्डियों का खाद बहुत लाभ दायक होता है हड्डियों में फासफोरस होता है और उन के खाद के कारण पैदावार ज्यादा भी होती है। और अन्न आदि जो पैदा होता है उस का गुण बहुत अधिक होता है। यह बहुत बड़े विचार के योग्य बात है हज़ारों मन हड्डियां जो अन्य देशों को जारही हैं इस को रोकना चाहिये अन्न आदि जो अब बग़ैर हड्डियों के खाद के पैदा होते हैं वह बहुत निर्बलता रखने वाले होते हैं जमीदारों को चाहिये कि अपने २ गाओं की हड्डियां बाहर न जाने दें।

यह सच है कि युरूप और अमेरिका और जापान आदि ने तिजारत शिल्प विद्या आदि में जो पाया हासिल किया है वह बहुत बड़ा है और वह हम से बहुत आगे हैं—परन्तु मित्रगण मैं फिर कहूंगा कि इन सब बातों के ठीक प्रकार से करने के लिये बुद्धि, बल और तेज और धर्म-भाव की आवश्यकता है—लाख आप एक आदमी को कहियेगा और समझाईयेगा कि यह काम करना चाहिये और वह नहीं करना चाहिये और उस के अन्दर बुद्धि और बल और तेज और धर्म-भाव नहो तो आप के समझाने से कुछ भी नहीं होगा—और आप उसको कुछ भी न कहें केवल उस के अन्दर यह चारों बातें होवें, या आजावें तो आप देखेंगे कि वह उन सब बातों को करता हुआ दीख पड़ेगा कि जिन को आप चाहते हैं। और इसका साधन मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार वही छोटी सन्ध्या है:—

इस विषय में मैं इतना और निवेदन करना चाहता हूं कि हम को काम या रुपये का गुलाम नहीं बनना चाहिये काम और रूपया हमारे वास्ते हैं हम उन के वास्ते नहीं हैं। यदि हम काम करते २ और रुपया कमाते ही मर जावें और अपने पीछे अपने बच्चों को भी वही मीरास काम के और रूपये के पीछे मरते रहने की दे जावें तो फ़ायदा क्या हुआ। जिस प्रयोजन से काम किया जाता है और रुपया कमाया जाता है अर्थात् सुख की प्राप्ति वह तो हम को प्राप्त होता ही नहीं हम खाने पीने और हवा ख़ोरी और आराम से भी अपने आप को महरूम कर लेते हैं परिणाम यह होता है कि बुद्धि और बल जो काम करने

और रुपया कमाने के लिये जरूरी हैं, हम उनको खो बैठते हैं और फिर हम काम करने और रुपया कमाने के योग्य भी नहीं रहते हैं। परन्तु यदि काम करते हुये और रूपया कमाते हुए साथ २ हम काम से और रुपये से सुख भी उठाते रहें और अपने आराम खान पान आदि का विचार रक्खें तो यह काम और रुपया हमारे गुलाम अर्थात् हम को सुख पहुंचाने वाले बन जावेंगे। और हमारे अन्दर इस आराम आदि के कारण काम करने और रुपया कमाने की योग्यता भी बढ़ती जावेगी। अंग्रेज साहबान् से हमको इस विषय में भी शिक्षा लेनी चाहिये। वह इतवार को तो पूरा ही आराम करते हैं। बाक़ी छः दिनों में भी अपने खान पान हवा खोरी और टेनिस-क्लब की हाज़िरी, खेल कूद आदि द्वारा आनन्द उड़ाते रहने की पूरी कोशिश रखते हैं। और फिर कुछ काल के अनन्तर, महीने दो महीने के लिये यात्रा आदि के लिये पहाड़ों आदि पर चले जाते हैं। और इस के फल को आप बिचार लेवें। वे थोड़ी देर में इतना काम कर लेते हैं कि जितना हम लोग बहुत ज्यादा देर में कर सकते हैं। और रुपया भी वही कमाते हैं। कैसे आग पानी-बिजली-मट्टी, लोहे आदि तक से उन्होंने काम लिया है। कारण यह कि उन के शरीर और बुद्धियां ठीक रहती हैं और छोटी संध्या इस बात में भी हम को सफलता दे सकी है।

यहां पर एक बात की ओर आपका ध्यान दिलाना उचित है रामायण में ऋषि ने बहुत ठीक कहा है।

हानि, लाभ, जीवन, मरण । यश, अपयश विधि हाथ ।

दूसरे शब्दों में हानि लाभ आदि मनुष्य के अपने ही कर्मों के फल होते हैं। व्यवहार, कृषी आदि में अब टोटा या नुकसान हो जाता है तो निश्चय वह हमारे पिछले कर्मों का फल होता है। ऐसे समय में ईश्वर के पुत्रों को घबराना नहीं चाहिये। घबराने से हानि ही होती है लाभ कुछ नहीं। बुद्धि बल आदि का नाश होता है जिस से आगे के काम में भी हरज होता है। और कमजोर असर शरीर में से निकल कर दूसरों के लिये हानि कारक होते हैं। टोटे और अनेक प्रकार के दुःख क्लेश आदि को भी बड़े और महान् लाभ का कारण बना लेना चाहिये। अर्थात् वही "पिता जी सब आप के भक्त बन जायें" कहते हुए परम पूर्णता के भंडार में पहुंच जाना और उस का वही "ओं भूः ओं भूः" अपने आप को कहते हुए सुनना। और संसार को निहाल करने वाले बने हुये अपने आप को पाना।

यह भी याद रहे कि जैसा पहिले इशारा किया गया है हमारी मन चाही बात न होने में किसी का भी दोष सिवाये हमारे या हमारे कर्मों के नहीं है जब मनुष्य की ओर से अन्याय होता है तो वह भी ईश्वर की ओर से न्याय ही समझा जाना चाहिये। जो दशा हम पर आती है वह हमारे ही कर्मों का फल है। लोग प्रायः कहा करते हैं कि "First deserve and then desire". अर्थात् पहिले (किसी पदवी आदि के) योग्य या अधिकारी (ईश्वर की दृष्टि में) बनो। तब उसकी इच्छा

करो परंतु ऊंचे दरजे की बात यह है कि Only deserve and do not desire. अर्थात् (उच्च पदवी आदि की) योग्यता प्राप्त करलो और उनकी इच्छा कदापि न करो वह तुम को बिदून इच्छा के स्वयम् ही प्राप्त हो जायेंगी दुनियां में कोई ताकत नहीं है कि जो तुम को उन की प्राप्ति से रोक सके। परंतु हमारी आज कल की कार्य्यवाही से प्रतीत होता है कि मानो हम कहते हैं कि "Never mind if you do not deserve; go on desiring; & go on complaining & murmurring if your desires are not ful filled." अर्थात् "कुछ परवाह नहीं यदि तुम (किसी पदवी आदि के) योग्य नहीं हो। परंतु (उसकी) इच्छा अवश्य किये जावो और वह इच्छा पूरी न हो तो (औरों की) शिकायत करते रहो और मन में दुःखी होते रहो"। चाहे उनका पूरा न होना इसी बात का सबूत है कि तुम योग्य नहीं हो कि तुम्हारी इच्छायें पूरी हों यूरुप अमरीका आदि के लोग हमारे शास्त्रों के मनतव्यों पर बहुत कुछ चलते हैं अर्थात् योग्यता प्राप्त करते हैं हमको चाहिये कि योग्यता की प्राप्ति और इच्छा न करने की महान् उच्च दशा को लाभ करें। और इस का साधन और हानि दुःख आदि की दशा के लिये धैर्य्य और दृढता का साधन भी वही छोटी संध्या है।

समुद्र यात्रा।

वैश्य जाति के धर्मों के संबन्ध में मुझको एक बात के विषय में कुछ निवेदन करने की आवश्यकता प्रतीत होती

है कि जिस पर यहां कलकत्ते में भी एक बड़ा आन्दोलन होरहा है–अर्थात् समुद्र यात्रा–अब कुछ दिनों से हमारे देश में इस का हिन्दु जाति–रिवाज बढ़ने लगा है। तिजारत या व्यवहार के लिये तो कम, परन्तु विद्या पढ़ने आदि के लिये बहुत हमारे भाई इंगलैन्ड, अमरिका, जापान आदि को जाने लगे हैं कि जहां से वह बैरिस्टर, इंजिनियर डाक्टर, सिवल सरविस के मेम्बर आदि होकर आते हैं और प्रायः बड़ी २ आमदनी पैदा करने के योग्य बन जाते हैं। और इससे और लोगों को भी उत्तेजना इंगलैंड आदि जाने की होती है। इधर देश और जाति के जो लीडर गिने जाते हैं उनकी मति यह है कि जिस चाल पर दुनिया चल रही है जिस प्रकार और २ देश शिल्प विद्या, तिजारत, इत्यादि में उन्नति कर रहे हैं उसको विचार कर हमारे देश को जीवित रहना भी असम्भव हो जावेगा यदि हम भी अपने देश की विद्याओं के साथ २ आवश्यक पश्चमी विद्याओं को लाभ कर के इसी प्रकार उन्नति न करें–और हमारे देश के लीडर बहुत प्रयत्न इस बात का कर रहे हैं कि अधिक २ संख्या हमारे नौ जवानों की पश्चिमी देश में जाकर इन विद्याओं को सीख कर आवें और अपने देश को लाभ पहुंचावें यदि विचार किया जावे कि कपड़ा, कांच का सामान मशीनरी आदि कितने करोड़ों रुपये का सामान हमारे देश में उन देशों से प्रति वर्ष आकर कितना रुपया हमारा उन देशों में खिचा चला जाता है और उन देशों के लोग हमारे देश में आकर जो रहते हैं और कितना रुपया प्रति वर्ष अपनी विद्या आदि के कारण हमारे देश

में से कमा कर लेजाते हैं और इसी प्रकार की और बहुत सी बातें हैं जिन का गिनवाना इस ऐड्रेस को बहुत लम्बा बना देगा और जिन को स्वदेशी के प्रचार के कारण बहुत लोग जान गये हैं कि जिन को बिचार कर देश के लीडरों की मति ठीक ही समझी जाने योग्य है इन बातों का आप की वैश्य जाति से तो सबसे अधिक संबन्ध है और इसी को बिचार कर आप की कान्फरेंस में कई साल से एक रिजोयूशन पास हुआ करता है कि जिस में नौ जवानों को समुद्र यात्रा कर के उन देशों में विद्या पढ़ने के लिये प्रेरणा की जाती है इस में कुछ हमारे भाई विरोध भी करते हैं परन्तु विरोध का कारण इस के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है कि पश्चिमी देशों में जाकर खान पान और आचार हिन्दू जाति के नियमों के अनुसार रहना कठिन है। जो हिन्दू लोग वहां गये हैं और उन्होंने खान पान का विचार रक्खा है। उनसे हमारे भाइयों में से किसी को विरोध नहीं हुआ है। महाराजा जयपुर आदि इस बात की मिसाल हैं। यदि उन देशों में जाकर विद्या आदि पढ़ना आवश्यक समझा जाता ही है और यदि वहां जाकर धन आदि लाभ करने का सुभीता और उपाय प्राप्त होता है तो उचित प्रतीत होता है कि वहां जाने में विरोध न किया जावे किन्तु ऐसा सुभीता पैदा किया जावे कि खान पान आदि न बिगड़े चन्दा करके ख़ास २ जगहों में ऐसे आश्रम बनाये जावें कि जिन में हमारे नौजवान रह कर खान पान हिन्दुओं के नियमानुसार कर सकें बल्कि मैं तो यह भी बहुत आवश्यक

समझता हूं कि उन स्थानों में ऐसा भी प्रबन्ध होवे कि जिस से हिन्दू धर्म के संस्कार स्थिर रहें और भक्ति भाव पैदा होने और उन्नत होने का निश्चय हो सके। इस के बिना बड़ा डर है कि हमारे बच्चों के आचरण बिगड़ जावें। परन्तु ऐसे आश्रमों आदि का प्रबन्ध यदि होवे तो उस में कुछ समय अवश्य लगेगा और इस बीच में इन देशों में जाने वालों की संख्या देश भक्ति, लीडरों की प्रेरणा, और धन के लोभ के कारण बढ़ती जावेगी। इन में से बहुत से ऐसे होंगे कि जिन के लिये हिन्दू जाति के और विशेष कर वैश्य जाति या वैष्णव धर्म के अनुसार अपना खान पान रखना बहुत ही कठिन होगा ऐसे लोग जब वापिस आवें तो उनके साथ हमारा क्या बर्ताव होना चाहिये? मित्रो यह बात बहुत और बहुत ही बड़े विचार के योग्य है कोई साधारण मामला नहीं है। हिन्दू धर्म को बहुत बड़ी और भारी हानि पहुंचने की सम्भावना है। यदि उनको पतित कर दिया जावे तो प्रथम तो समय का प्रभाव कुछ ऐसा हो रहा है कि आर्य्य समाज और ब्रह्म समाज आदि और उन लोगों के कारण कि जो उन समाजों से सम्बन्ध तो नहीं रखते हैं परन्तु समुद्र यात्रा आदि के साथ सहानुभूति रखते हैं और उन लोगों के कारण भी कि जो यहां देश में रहते हुये भी आचार का विचार नहीं रखते हैं। और उन में से बहुतसों का खान-पान आदि उन में से भी बहुत ज्यादा भ्रष्ट है कि जो विलायत हो आये हैं। ऐसे समाजों और लोगों

T

के कारण उन विलायत से लौटे हुये लोगों को पतित करना कुछ कठिनसा भी है। उन लोगों को छाती से लगाने को आप के बहुत भाई तैयार हैं। कलकत्ते के वैश्य भाईयों में चाहे इसका रिवाज कम होने से कुछ अधिक विचार कुछ काल के लिये हो परन्तु और २ स्थानों में इंगलेन्ड आदि से आये हुये लोगों के साथ बराबर खान पान और बिवाह आदि का सम्बन्ध बना हुआ है। और हमारे भाई जो इसके विरोध में अपनी शक्तियां खर्च करते हैं वह कुछ फ़ज़ूल सी बात प्रतीत होती है। इन शक्तियों से कुछ और काम लिया जावे तो बहुत अच्छा हो।

दूसरे यह है कि यदि उन लोगों को पतित कर दिया जावे तो इसका परिणाम क्या होगा? यह लोग या इन में से बहुत से दूसरे धर्म में जाकर हिन्दू धर्म के कट्टर विरोधी बन जावेंगे और बहुत सम्भव है कि वह नहीं तो उनकी सन्तान तो मांस को ग्रहण करने लगे। मैं क्षमा मांग कर निवेदन करता हूं मुझ को माफ किया जावे यदि मैं यह कहुं कि इस पाप के कारण वह लोग होंगे कि जो ऐसी सख्ती का बर्ताव इंगलैंड आदि से लौटे हुये भाईयों के साथ करेंगे बल्कि आर्य्य समाज आदि के लोग जो उनको मिलावेंगे वह इस पाप से उनको बचाने के पुण्य के भागी समझे जावेंगे।

यह शायद सच हो कि हिन्दू धर्म के अनुसार यह लोग पतित होने के योग्य हैं। मगरचे हम सुनते हैं कि

प्राचीन काल में भारत निवासी लोग समुद्र यात्रा किया करते थे। परन्तु थोड़ा समय की ओर भी तो देखो। इन ही बेचारों की इतनी बड़ी क्या खता समझी जाती है कि जिन में से बहुत से इस लालच से कि उन को लोग बिरादरी में मिला लेवें कुछ ज्यादा अनुचित व्यवहार विलायत में रह कर करने में डरते भी हैं? यहां के रहने वालों को तो देखो खुले ख़ज़ाने सब कुछ और हर एक किसी के हाथ का खाने में कुछ भी सङ्कोच नहीं करते हैं उनको पतित करने का कोई ख़याल तक भी नहीं करता है इसके सिवाय मिश्री का व्यवहार और बर्ताव शफ़ाखानों और अङ्गरेजों आदि की दुकानों की दवायें जिन में पानी मिलाया जाता है उससे कितने आदमी बचे हुए हैं मेरा मतलब यह नहीं है कि खान पान के व्यवहार को बिलकुल तोड़ देना चाहिये। मैं इस व्यवहार को बहुत बड़ी कदर की निगाह से देखता हूं और बावजूदे कि मुझ को हर प्रकार की संगत रही है परन्तु ईश्वर की कृपा से मेरा खान पान का व्यवहार ऐसा है कि आप की कृपा से लोग प्रशंसा ही करते हैं परन्तु साथ ही मैं यह भी समझता हूं कि जबकि हम उन भाईयों को पतित नहीं करते हैं या नहीं कर सकते हैं कि जो बिदून किसी विशेष कारण के यहां रह कर बिना संकोच और परदा रखने की कोशिश के विरादरी की कुछ भी परवा न करते हुए अपना खान पान प्रायः उससे बहुत जियादा बिगाड़ लेते हैं कि जितना उन बेचारे समुद्र यात्रा वालों का बिगड़ता है तो यह लोग जो बड़े उच्च भाव को लेकर बिदेश यात्रा करके विद्या आदि

पढ़कर देश की सेवा करने के लिये तैयार होकर आते हैं और केवल विदेश में रहते हुए ही इनका खान-पान बिगड़ा रहता है। यहां आकर वह शुद्ध व्यवहार करने लग जाते हैं ऐसे देश भक्तों को पतित करना मेरी राय में बड़ा अनर्थ है, बड़ा जुल्म है, बड़ी जियादती है और मेरे भाई मुझ को कृपा कर के क्षमा करें जब मैं कहूं कि इस विषय में धर्म की आड़ में केवल आर्य समाज आदि से विरोध के कारण काम करना एक प्रकार की हठ धर्मी और पाप समझा जाने की बात होगी। ऐसी हठ धर्मी वालों को परलोक में दुःख उठाना पड़ेगा और इस लोक में शरम उठानी पड़ेगी क्यों कि बहुत थोड़े लोग होंगे जो उनके साथी होंगे और उनको विदेश से लौटे हुये भाइयों को पतित करने में कामयाबी हासिल नहीं होगी। यह याद रहे कि सनातन धर्म का गौरव श्रेष्ट बातों के करने में है और यह नहीं कि जैसा कि प्रायः देखने में आता है पूजा पाठ संध्या वंधन आदि तो केवल नाम मात्र को या बिलकुल भी नहीं। मंदिर में शायद ही जन्माष्टमी वा शिवरात्री आदि को भूल कर चले जाते हों। कर्म चाहे जैसे करें परन्तु आर्य्य समाज का बिरोध जायज़ ना जायज़ कर दिया और सनातन धर्मी बन गये। यहां तक कि कोई मनुष्य यदि विद्या, सत्य भाषण, अग्नि होत्र, आदि का जिक्र भी करे तो हमारे कोई २ भाई उस को आर्य्य समाजी समझ कर कुछ दूसरी ही दृष्टि से देखने लगते हैं। मानों उनकी राय में सनातन धर्म को विद्या ब्रह्मचर्य्य, अग्नि होत्र, और सत्य भाषण आदि श्रेष्ट कर्मों से भी बिरोध है।

T

और यदि इन विदेश से लौटे हुये भाइयों के साथ इतनी सख़्ती के बदले कुछ प्रेम का बर्ताव हो। यदि इन लोगों को लौट कर आने पर साधारण सी चान्द्रायण मिसल गंगा स्नान, गायत्री जाप, हवन, और ब्रह्म भोज करा कर बिरादरी में शामिल कर लिया जावे जबकि यहां रहने वाले भ्रष्टाचारियों को शामिल रक्खा जाता ही है तो इसका नतीजा यह होगा कि यह लोग अन्य देश में जाकर भी हिन्दू मत के अनुयायी और प्रेमी और पूरे तरफ दार बने रहेंगे और हिन्दू मत से प्रेम रखने के कारण अपने आचार को उससे जियादह नहीं बिगड़ने देंगे कि जितना उनकी शक्ति के अन्दर है और विदेश में हिन्दू धर्म के महत्व का प्रचार करेंगे विदेशियों और अन्य मत वालों को गोहिंसा आदि से बचायेंगे और यहां आकर पूर्ण प्रकार से हिन्दू नियमों के साथ रहेंगे जैसा कि बहुत लोग अब भी करते हैं और वह साधारण हिन्दुओं की अपेक्षा हिन्दू धर्म के बहुत जियादह तरफदार होवेंगे और उधर इंगलेंड आदि देशों से विद्या सीख कर आकर अपने देश की उन्नति करेंगे इसलिये इन लोगों की सहायता करना बड़ा धर्म का काम है। और उन की सहायता करने वाले दोनों लोकों में यश के भागी होंगे।

हिन्दू धर्म की जो इस विषय में शिक्षा है यहां पर मैं उसकी ओर आप का ध्यान दिलाना चाहता हुं एक श्लोक जोकि हिन्दू लोग सब कामों के आदि में पढ़ा कर ते हैं और जो मैने इस ऐड्रेस के आदि में पढ़ा है उस को

T

मैं इस अवसर पर फिर पढ़ना उचित समझता हूं वह यह है।

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वा वस्थां गतोऽपिवा।
यः स्मरेत पुंडरीकाक्षं सवाह्याभ्यन्तरः शुचिः।

अर्थात कोई मनुष्य चाहे अपवित्र हो चाहे पवित्र हो और चाहे सर्व अवस्था को प्राप्त होगया हो यदि वह परमात्मा का स्मरण करलेवे तो वह अन्तर और बाहर मे शुद्ध होजाता है, और जैसा कि मैंने पहले भी निवेदन किया है। यदि किसी अपवित्र स्त्री या पुरुष के स्मरण से या किसी बुरी इच्छा के मन में आने से मनुष्य तत्काल अपवित्र हो जाता है तो यह बात निश्चय ही है कि ईश्वर के स्मरण करने और शुभ इच्छा के मन में आने से मनुष्य तत्काल पवित्र हो जाता है और इस श्लोक का मंतव्य ठीक ही प्रतीत होता है गुसाईं तुलसी दास जी की दो चौपाईयां भी इस जगह दोहराने के योग्य हैं एक यह है कि:—

कहां लों करुं मैं नाम बड़ाई।
राम न सके नाम गुणगाई॥
बार एक राम, कहे जो कोई।
होय तरण तारण, नर सोई॥

और पूर्वोक्त विचारानुसार यह बचन अत्युक्ति नहीं कहे जा सकते हैं। ऐसे विचारों को मन में लाकर

T

हम को उस ऋषि पत्नी का भंगी से राम शब्द उच्चारण कराकर अपना घड़ा उठवा लेना अनुचित नहीं प्रतीत होता है कि जिसकी कथा पुराणों में इस प्रकार वर्णन की हुई सुनने में आई है। कोई ऋषि एक बस्ती में थोड़ी दूर अपनी पत्नी के साथ रहा करते थे और बस्ती के किनारे पर एक कुआं था उसमें से उनकी पत्नी घर के काम के लिये पानी लाया करती थी एक दिन ऋषि जी के स्नान के लिये उनकी पत्नी पानी लाने को गई उस दिन दैवयोग से वहां घड़ा उठाने में सहायता करने वाला कोई आदमी बहुत देर तक नहीं मिला बहुत देर के पश्चात् एक भंगी उस तरफ को आया तो ऋषि पत्नी ने अपने स्वामी के स्नान में देर के ख़याल से भंगी से घड़ा उठवा लिया परंतु पहले उस भंगी से ३ बार राम का शब्द कहलवा लिया जब घर पर आने पर ऋषि ने देर का कारण पूछा तो ऋषि पत्नी ने उत्तर देते हुए कहा कि महाराज मुझ को तो और भी ज़ियादा देर हो जाती यदि मैं भंगी से घड़ा न उठवाती। इस पर ऋषि बहुत घबराये और कहा कि भंगी के घड़ा छू जाने से तो घड़ा और ऋषि पत्नी और सारा घर तक भी भ्रष्ट हो गया। ऋषि पत्नी ने कहा "महाराज आप घबराईये नहीं मैंने भंगी से ३ बार राम राम कहलवा लिया था" इसको सुन कर फिर ऋषि ने अपनी पत्नी को डांटा और कहा कि राम नाम में तेरा विश्वास कम हो गया प्रतीत होता है। क्या एक ही बार राम कहलवा लेना उस भंगी को पवित्र कर देने के लिये काफ़ी नहीं था?

T

प्यारे मित्रों! जब कि हमारे धर्म में एक बार राम का शब्द उच्चारण कर लेने का इतना महात्म माना गया है उन बिदेश से आये हुए भाईयों को उक्त प्रकार चान्द्रायण करा कर मिला लेना विशेष कर ज़माने की हालत को देख कर पूर्ण तया उचित ही है और इस के विपरीत करना हिन्दू धर्म के मंतव्यों के बिरुद्ध प्रतीत होता है।

परन्तु मुझ को जियादा कहने सुनने की इस बिषय में भी आवश्यक्ता नहीं है। मेरा बिश्वास ईश्वर पर है। यदि उसकी कृपा अर्थात छोटी संख्या से काम लिया जावे तो बस सब प्रकार मंगल ही होगा।

बाल शिक्षा

मित्र गण ! अब जो मुझ को आप की सेवा में निवेदन करना है वह भी एक बहुत ध्यान के योग्य बात है जो २ बातें आप की कान्फ्रेंस में बिचारणीय हैं वह सब बड़ी आवश्यक हैं। परन्तु यह अन्तिम बात जो है यह भी किसी से कम नहीं है। वह है अगली पौद को ठीक तरीके पर तयार करना हमारा प्रेम और हमारी आवश्यकतायें यह चाहती हैं कि हमारे बच्चे तन्दुरुस्त, बलवान, विद्वान और धर्मात्मा हों। वह अपनी जाति के नहीं अपने देश के नहीं किन्तु जैसा कि हर एक हिन्दू का हक है सारे संसार के सेवक हों।

इस बिषय पर पूर्ण विचार का रिवाज न होने के कारण चाहे हम लोग कुछ क्षमा के योग्य समझे जावें नहीं तो हमारे बिचार के योग्य यह बात है कि अपनी संतान से

अधिक प्रेम के पात्र और कोई वस्तु संसार में होती नहीं है और यह बेचारे बिलकुल बेबश और माता पिता के ही आधीन होते हैं। और मानो अपने इन बच्चों को ईश्वर परमात्मा माता पिता के सपूर्द ठीक तौर पर परवरिश करने के लिये करता है और माता पिता की बहुत भारी जिम्मेदारी है। और यदि कोई इन अपने और ईश्वर के बच्चों की तन्दुरस्ती और बल और विद्या और धर्म जैसी आवश्यकीय बातों का ओर से बे परवाही करें या बिरादरी के रिवाज स्त्रियों के खयालात की वेजा पाबन्दी आदि जैसे कारणों से इन बातों की प्राप्ति बच्चों को कराने के लिये अपनी शक्ति भर प्रबन्ध न करें तो क्या ऐसे पुरुष को आप बड़ा भारी जिम्मेदार ही नहीं किन्तु पुत्र हिंसक और पुत्री हिंसक नहीं कहेंगे ? और क्या इस हिंसा से बड़ी और कोई हिंसा और इस पाप से बड़ा और कोई पाप आप की समझ में हो सकता है ? ओह ! विचार करने पर रोंगटे खड़े होते हैं। त्राहिमान् ! त्राहिमान् ! परमात्मन् ! बचाना हम सब को ऐसे महा पाप से ऐसे इन बे बस आधीन अपने बच्चों की हत्या से क्या हुआ यदि किसी ने अपने बच्चों के लिये लाखों करोड़ों रुपये छोड़ दिये और उनको तन्दुरस्ती आदि का प्रबन्ध न किया। बिरादरी आदि के बिलकुल कमज़ोर और अपाहज रिवाजों के बहाने से या पक्षपात बश होकर छोटी उमर में शादी करके उनका मानो गला काट डाला, उन के जीवन को मौत से ज्यादा दुःख दाई बना दिया, और आगे को उन बेचारों को अपनी सन्तान को

बीमार, कीड़े, पतंगों के समान निर्बल देखने का महा कष्ट उठाना पड़ा।

यह लोग जो लाखों करोड़ों रुपये तो चाहे अपने बच्चों को दे जावें परन्तु उन के स्वास्थ विद्या और धर्म की प्राप्ति का प्रबन्ध करने में बड़े तुच्छ कारणों से ग़ाफ़िल और बेपरवाह रह कर उन के जीवन को मृत्यु से भी ख़राब बना देवें उनकी अपेक्षा वह माई के लाल बहुत और महान् प्रशंसा के पात्र समझे जावेंगे कि जो रुपये तो चाहे अपने बच्चों के लिये न छोड़ें, परन्तु उन को बलवान, तेजवान, विद्वान और धर्मात्मा बना जावें। ऐसे बच्चों को धन कमाना भी कुछ कठिन नहीं हो सकता है और उन बच्चों के मुक़ाबले पर वह अमीर परन्तु निर्बल, और मूर्ख बच्चे सब प्रकार से दया के पात्र हैं।

मित्रगण! यह कोई साधारण बात नहीं है इस पर पक्ष पात रहित होकर पूर्ण विचार करना उचित है। शास्त्रानुसार और विचार और बुद्धि से पूरा काम लेकर काम करना चाहिये। इस में सन्देह नहीं है कि यह एक बहुत बड़ी शोचनीय बात है कि उच्च जातियों में बिरादरी का दबाव यदि कहीं है तो वह बहुत ही थोड़ा है। और वह भी कम होता जाता है। परन्तु बच्चों की परवरिश आदि ऐसी बातें हैं कि उनमें प्रायः बिरादरी कोई दबाव डालने का हक़ नहीं रखती। और यदि प्रेम पूर्वक शान्ति के साथ बिरादरी की पंचायत में यह बात पेश की जावे तो सम्भव है कि बिरादरी अपने रिवाजों को ही बदल लेवे। और यदि न बदले और बिरादरी में अधर्म के

रिवाज बच्चों के इस लोक और परलोक का सत्यानाश करने वाले रिवाज क़ायम रहैं तो जो निर्बल बिरादरी दुराचारी और धर्म भ्रष्ठ लोगों का कुछ नहीं कर सकती है वह तुम्हारा भी कुछ नहीं कर सकेगी। तुम इस एक मामले में कम से कम उस की परवाह न करो और अगर कुछ बिरादरी के पक्षपाती लोग तुम को कष्ठ पहुंचावें भी तो प्यारो अपनी सन्तान के इस लोक और परलोक के परम सुख के लिये, उस सन्तान की सन्तान के भले के लिये, देश और जाति के भले के लिये, सारे संसार के भले के लिये कि जिस में वह तुम्हारे कष्ट दाता भी सम्मिलित हैं। इस कष्ट को खुशी के साथ सर पर रक्खो धर्म और ईश्वर आप के साथी होंगे और जय आप की होगी।

इस विषय में मिनजुमले और कई बातों के यह चन्द बातें हैं कि जो आवश्यकीय हैं:—

सब से पहिले तो बच्चों के अन्दर वही छोटी सन्ध्या के संस्कार डालने चाहियें। बच्चों के हृदय बड़े सरल होते हैं और उन के अन्दर यह संस्कार बहुत सुगमता के साथ आकर उन के महा आनन्द और लाभ के कारण हो सकते हैं।

दूसरे बच्चों की परवरिश ऐसे तौर पर करना कि जिस से उन के अन्दर बुरे संस्कार न पैदा हों और यथा शक्ति शुद्ध वायु आदि प्राप्त हो सके बच्चों के रूबरू गाली वगैरह से और और अपवित्र शब्दों से परहेज़ करना चाहिये और बुरी संगत से उन को बचाना चाहिये।

T

तीसरे व्यायाम—यह एक ऐसी चीज़ है कि इस के गुणों को प्रायः सब जानते हैं और उन के अधिक वर्णन करने की आवश्यक्ता नहीं है परंतु उन गुणों को जानते हुये भी लोग व्यायाम करते नहीं हैं। शुरु से ही बच्चों को जैसी उन की ताक़त हो उस के अनुसार व्यायाम कराना चाहिये इस विषय में मुझ को दो बातों के निवेदन करने की आवश्यक्ता प्रतीत होती है। प्रथम तो यह कि जब नौ जवानों और और मनुष्यों को भी व्यायाम का शौक हो जाता है अर्थात् अपने बल के बढ़ाने का तो वह व्यभिचार आदि बल का नाश करने वाले कामों से आपही परहेज़ करना चाहेंगे और यह कोई छोटा लाभ नहीं है। दूसरे यह है कि व्यायाम के समय हम को यह सोचते रहना चाहिये कि एक २ हरक्त जो हमारे हाथ पांव की होती है उस से हमारे अन्दर बल बढ़ता जाता है। और जैसे प्लेग वाले में से प्लेग के असर वैसे हमारे अन्दर से बलयुक्त असर निकल निकल कर वायु और आकाश को बलवान बना रहे हैं और इस वायु और आकाश से सारे संसार के अन्दर जैसाकि पहिले कहा गया है सुन्दर परिवर्तन होता जाता है। कि जो हमारे परम पिता को परम प्रसन्नता का कारण होता है। और मानो इस व्यायाम लीला को देख कर (रथ में रघुनन्दन आवत है) वाली बात होरही है। इस प्रकार के विचार से व्यायाम से बहुत अधिक बल आदि की प्राप्ती होना सम्भव है।

चौथे विद्या पढ़ाना—इस के गुणों को कौन नहीं जानता है? और उन के वर्णन करने की आवश्यकता

क्या है? केवल इतना कहना उचित प्रतीत होता है कि विद्या का शौक बच्चों के दिलों में उत्पन्न करना चाहिये वह उस को बेगार न समझें कि जिस से उनको दुःख और शोच हो। जैसाकि प्रायः हुआ करता है और उस से बेचारे बच्चों के स्वास्थ्य, बुद्धि आदि के बढ़ने में बड़ी हानि होती है। किन्तु वह उत्साह और प्रेम और आनन्द के साथ विद्या पढ़ें और विद्या पढ़ते हुये अपने आप को ईश्वर की प्रसन्नता के पात्र और सारे संसार के हितकारी समझने के आनन्द को और उस आनन्द के फलों को प्राप्त करते रहें और मानों उन की विद्या आदि लीला पर (रथ में रघुनन्दन आवत हैं) वाली आकाश वाणी आती हुई प्रतीत होती है। परन्तु अक्षरों की विद्या के साथ २ कोई एक या ज्यादा दस्तकारी आदि कृषि, बागबानी, आदि भी बच्चों को सिखलानी जरूरी हैं। और उन को नाजुक और ऐसा बनने से रोकना चाहिये कि उन को मेहनत करने से शर्म आवे तूल का भय न होता तो मैं इस विषय में बहुत कुछ निवेदन करता। परन्तु केवल इतना ही कह देना इस समय काफ़ी समझता हूं कि इङ्गलैंड और जरमनी और रूस आदि के बादशाहों को जहाज़ बनाना और जहाज़ चलाना और बहुत मेहनत के काम सीखने पड़ते हैं। और युरोप अमेरिका जापान आदि देशों में बड़े २ आदमी मेहनत के काम करने में शर्म नहीं मानते। हमारे देश में दस रुपये माहवार के बाबू साहिब को अपनी दो सेर की गठड़ी रेल पर से लाने में शर्म आती है। यह अहतियाउ

होना ज़रूरी है। कि बच्चे इस प्रकार की झूठी इज़्ज़त के ख्याल से ऐसे न बन जावें। कि बदून नौकर के उन का काम ही न चले और आमदनी कम और ख़र्च ज्यादा के महा दुःख के शिकार न बन जावें। हर रोज़ उनको कोई काम ऐसा करना चाहिये कि जिससे मिहनत का रब्त और इस झूठी शर्म से परहेज़ का मौका मिलता रहे।

पांचवें सन्ध्या आदि पञ्च यज्ञ, कि जो प्रत्येक ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य के तो कम से कम नित्य के कर्म हैं परन्तु जिन में से छोटो सन्ध्या या ईश्वर स्मरण का अधिकार शूद्रों को भी प्राप्त है यह वह काम नहीं है कि जिन को लोग बेगार समझते हैं परन्तु मेरे पूर्वोक्त निवेदन पर ध्यान देने पर निश्चय हो जावेगा कि इन से आनन्द का देने वाला और इन से अधिक लाभ का कारण और कोई भी काम संसार भर में हो ही नही सकता है कि जो हमारे सारे कामों को अमृत मय बना देता है।

पहिला यज्ञ-सन्ध्या है कि जिस के विषय में कहा तो और भी बहुत कुछ जासकता है। परन्तु जो कुछ मैंने पहिले निवेदन कर दिया है उससे अधिक कहने में आप का समय लेना नहीं चाहता हूं

दूसरा यज्ञ-अग्नि होत्र है कि जो हमारे नित्य कर्मों में गिना जाता है इस का महात्म तो वर्णन होना कठिन है और इधर समय का भी अभाव है संक्षेप के साथ केवल यह निवेदन कर देना उचित समझता हूं कि पहिले का हाल तो सुना है परन्तु हमारे देखते भी यह बात थी

कि दादाओं और पिताओं की स्थिति में पुत्रों और पुत्रियों की मृत्यु कभी होती थी तो वह एक बड़ा भारी अनर्थ समझा जाता था बारिश की कमी से जो अब बहुत बार बड़े कष्ट देखने में आते हैं। और ज्यादा बारिश से खेती तो एक तरफ रही गांव के गांव बह जाते हैं और कहीं काटी हुई फसल तक को बारिश के कारण उठाने का अवसर नहीं प्राप्त होता है पहिले समय में यह बातें बहुत कम होती थी और और अनेक प्रकार की बाधा जो पहले की अपेक्षा देश को हो रही है उसका एक विशेष कारण अग्नि होत्र का न होना है अग्नि होत्र की विधि हमारे शास्त्रकारों ने कोई बे फायदा को बेगार और वक्त का खून ही करने के लिये नहीं रक्खी थी पश्चमी लोग भी शास्त्रों के उसूलों को मानने लगे हैं। गवर्नमेंन्ट ने तजर्बा करके देखा है। कि धुयें से प्लेग नहीं होती है। साधारण धुयें का यदि यह फल है तो अग्नि होत्र का सुगंधित और सुन्दर पदार्थों का धुआं और उसके साथ उन मंत्रों आदि के असर और ईश्वर के बच्चों के दिलों के भाव न केवल वायु और आकाश और जल और अन्न को शुद्ध करने वाले होते हैं। किन्तु महा आनन्द का दृश्य अग्निहोत्र के समय पेश करते हुये अग्नि होत्र करने वालों की ही नहीं किन्तु सबकी बुद्धियों को शुद्ध करते हुये धर्म की ओर लगाने के कारण होते हैं। पूर्व समय में बीमारी कम होने और उचित समय पर वारिश होने और पाप कम होने का एक कारण यह अग्नि होत्र भी था अग्नि होत्र में समय और धन जो खर्च होता है

उससे और बहुत सी महा उपकारी बातों के अतिरिक्त यह भी एक लाभ होता है कि परिवार बहुत सी बीमारियों और कष्टों से बच जाता है और डाक्टर के और केमिस्ट के बिल भी बहुत बड़े नहीं होते हैं और बीमारी कम होने के कारण कार बार के लिये समय अधिक मिलने से धन कमाने का अवसर ज्यादा मिल जाता है वेदों में अग्नि को परमात्मा का मुख कहा है इस लिये एक २ आहुति जो स्वाहा कह २ कर अग्नि में डाली जाती है। वह मानो बच्चों के हाथों से परम पिता को बड़ा सुन्दर भोजन कराया जाता है। कि जिससे पिता जी परम प्रसन्न होते हैं। अग्नि होत्र देवताओं की तृप्ति का कारण समझा जाता है। अग्नि होत्र का भाग सारे संसार को बड़ों, छोटों, राजा, प्रजा, अच्छे, बुरे, मित्र, शत्रू, आदि सब को पहुंचता है। इस के महात्म वास्तव में वर्णन में नहीं आ सकते हैं। मैं अपने गांव के लोगों से कहा करता हूं कि ग़रीब आदमी चार आने की सामिग्री एक महीने के लिये लेकर रख लेवे और उसमें से प्रतिदिन तीसवां भाग निकाल कर उस की सात आहुति परिवार के सब लोगों को पास बिठला कर और नहीं तो यह कहकर अग्नि में डाल दिया करें कि "पिता जी सब आप के भक्त बन जायें स्वाहा" और किसी को जियादा करने की सामर्थ हो तो जियादा हवन कर दिया करे। मल मूत्र आदि के त्यागन से जो हम संसार में मलीनता और बीमारी फैलाते हैं और चूल्हे-चक्की-झाड़ू आदि से जो हम से प्रायः कुछ हिंसा

T

हो जाती है उसका प्रायश्चित् यह दैनिक अग्नि होत्र है और इसी से यह स्पष्ट होता है कि अग्नि होत्र न करना बड़ा पाप है। और उसका करना बड़ा पुण्य है। मैं प्रायः बतौर मज़ाक के कहा करता हूं कि बीमारी और क़हत और पनकाल और पाप और दुःख जो दुनिया में हैं इस के ज़िम्मेदार वह लोग हैं जो अग्नि होत्र नहीं करते हैं। और बीमारी की कमी और फ़सल वगैरः का पैदा हो जाना आदि जो कुछ भी सुख दुनिया में दीख पड़ता है उस के कारण हम लोग हैं जो अग्नि होत्र करते हैं। वास्तव में अग्नि होत्र करने वाले को इस प्रकार का खयाल अपने विषय में रखने का अधिकार है कि जो उस के लिये बड़ी शान्ति का कारण होता है। मित्रों! अग्नि होत्र अवश्य सब को करना उचित है इस से कार्बोनिक ऐसिड फैलने का भय जिस का कभी २ बहाना किया जाया करता है वह सर्वथा ग़लत है।

तीसरा यज्ञ–पितृ यज्ञ है। चौथा–बली वैश्य देव और पांचवा--अतिथि यज्ञ है और यह सब बहुत ही बड़े आवश्यकीय हैं।

इन यज्ञों के संस्कार बच्चों के अन्दर शुरू से पैदा होने का यत्न होना उचित है। इसलिये और बातों के अतिरिक्त हम को अपने नमूने से भी उन को इस विषय में शिक्षा देनी चाहिये।

चौथे संस्कार—इनकी संख्या सोलह हैं कि जो सब के सब बड़े उत्तम और महा लाभ के कारण होते हैं।

परंतु उनको इस समय वर्णन करने में बहुत समय लग जावेगा। उन में से केवल दो की ओर आपका ध्यान दिलाना आवश्यक है एक गर्भाधान और दूसरा उपनयन संस्कार–मैं उचित समझता हूं कि पहिले उपनयन संस्कार के सम्बंध में कुछ अपने विचार प्रकट करूं। इस संस्कार का रिवाज हमारी वैश्य जाति में बहुत कम होगया है परंतु सब जानते हैं कि ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य जो द्विज कहलाते हैं तो उनकी द्विज संज्ञा उसी समय से होती है कि जब उन का उपनयन संस्कार हो चुकता है। इस संस्कार से पहिले वह शूद्र गिने जाते हैं "जन्मना जायते शूद्रः" हम बिदून इस संस्कार के अपने आप को द्विज या वैश्य कहने का अधिकार ही नहीं रखते हैं परन्तु हमारी जाति में से इस का रिवाज बहुत कुछ जाता रहा है। बहुत लोग तो इस बात की तरफ़ ध्यान भी नहीं देते हैं कि उन को जनेऊ लेना चाहिये। बहुत से ऐसे हैं कि जिनके परिवार में दैव गति से कोई एक या दो या शायद ज़ियादा आदमी ऐसे मृत्यु को प्राप्त हो गये कि जिन्होंने जनेऊ लिया था और उन के परिवार के लोग यह समझ बैठे कि जनेऊ ही मृत्यु का कारण हुआ मानो जनेऊ न लेते तो कदापि मृत्यु न होती और जनेऊ लेना कम से कम उनके परिवार के लिये ना मुबारिक और अशुभ समझा जाने लगा जनेऊ न लेते हुये भी यह लोग हिम्मत करते हैं कि उन के संबन्ध वैश्य जाति में हों और उन को कोई शूद्र न कहे। ख़ैर मेरी ग़र्ज़ यह नहीं है कि एक और नया कारण एक नया

फिरका कायम करने का पैदा होवे और सम्बन्धों में और भी दिक्कत पड़े परन्तु हर एक वैश्य को यज्ञोपवीत अवश्यमेव लेना चाहिये। जिनकी उम्र बहुत जियादा हो गई है उन को भी और कम उम्र वालों को भी देखियेगा बढ़ई लोग हजारों हजार अपने आप को धीमान् ब्राह्मण कह कर सब जनेऊ पहिनने लगे हैं। और सन्ध्या करने लगे हैं। और उन के आचरण और दिल और हौसले भी इस के कारण ऊंचे हो गये हैं। और हमारे आर्य्य समाजी भाई तो प्रायः कितने शूद्रों को भी जनेऊ पहिना देते हैं। अब शूद्र तक तो जनेऊ-धारी बन जायेंगे और वैश्य बिचारे रह जायेंगे। जनेऊ जैसी चीज़ मृत्यु का कारण होवे ऐसा समझना भारी ग़लती है। ऐसे धर्म के काम से कि जिसमें अत्यन्त पवित्र कार्य्य-वाही संस्कार के समय होती है और जिसमें बड़े २ सुन्दर आशीर्वाद आचार्य आदि के मिलते हैं जैसा कि आगे लिखे हुये श्लोक से प्रकट होगा ऐसे काम से मृत्यु रुक जावे तो आश्चर्य नहीं। याद रहे मृत्यु जनेऊ से कदापि नहीं होती और न हो सकती है यदि जनेऊ लेने के पश्चात् कोई एक या जयादा हालतों में मृत्यु हो भी जावे तो उसका कारण जनेऊ जैसे धर्म के मुबारिक और शुभ काम को कदापि नहीं समझना चाहिये। द्विज शब्द के अर्थ हैं वह शख्स जिसका दूसरे बार जन्म हुवा होवे। उपनयन संस्कार के द्वारा मनुष्य के अन्दर संस्कार पैदा किया जाता है कि उसका जन्म मानो ईश्वर के घर में हो गया है। उपनयन के समय तक

उसकी समझ इतनी पक जाती है कि वह अपने आप को द्विज समझ सके। और ऐसा समझने के महा आनन्द और अधिकारों का लाभ उठा सके। यज्ञोपवीत देते समय ब्रह्मचारियों को प्रायः बड़ी कठिन जिम्मेवारियों का उपदेश द्वारा मानो एक भय दिखाया जाता है परन्तु उस के साथ यदि उनको यह भी बतला दिया जावे कि वह द्विज हैं अर्थात् ईश्वर के पुत्र हैं तो उनको उन जिम्मेदारियों के विषय में भय के बदले महा शान्ति और बड़ा भरोसा और आनन्द का ज्ञान हो जावे और जैसा कि छोटी सन्ध्या के संबन्ध में निवेदन हुआ है उनके जीवन बड़े आनन्दमय और संसार के लिये मंगलमय बन जावें।

मित्र गण ! इस विषय में मैं अपना छोटा सा वर्णन करने की आज्ञा चाहता हूं। जिस समय मुझ को अपने यज्ञोपवीत का किंचित खयाल भी आजाता है तो पूछिये नहीं कि मेरी दशा क्या आनन्द की होती है तुरंत ही मैं अपने आप को द्विज या ईश्वर का पुत्र और उसके आशीर्वाद का पात्र समझने लगता हूं—और यज्ञोपवीत पहनने के समय जो एक श्लोक पढ़ा जाया करता है अर्थात्:—

यज्ञो पवीतं परमं पवित्रं प्रजा पतेर्यत् सहजं पुरस्तात। आयुष्य मग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञो पवीतं बल मस्तु तेजः॥

जिस का संक्षिप्त भावार्थ यह है कि यह यज्ञोपवीत कि जो प्रजा पति परमात्मा के सहज स्वभाव से परम

T

पवित्र है। यह आयु की वृद्धि करने वाला मुक्ति और पवित्रता और बल और तेज का देने वाला होवे। इस श्लोक का भाव एक दम मेरे दिल में आकर किस कदर आनन्द और भरोसा और हिम्मत और हौसला आदि मेरे अन्दर पैदा करने का कारण होता होगा, इसका अनुभव आप खुद कर लीजियेगा।

कोई २ लोग जनेऊ इसलिये भी नहीं लेते हैं कि उस में ख़र्च ज्यादा पड़ता है। परन्तु जैसा कि विवाह के विषय में कहा जाया करता है कि सेर भर मोतियों में विवाह और सेर भर चावलों में विवाह ऐसे ही यज्ञोपवीत में रुपया ख़र्च किये विदून काम हो सकता है बल्कि मेरी राय तो यह है कि रुपया ख़र्च करना ही नहीं चाहिये। किसी के के पास हो तो और कामों में ख़र्च कर सकता है रुपये के भय से यज्ञो पवीत जैसी वस्तु से विहीन रहना कैसे शोक को बात है मैंने कई उपनयन संस्कार देखे कि जिनमें दो चार रूपये से अधिक ख़र्च नहीं पड़ा है

इस विषय में ज्यादा न कहता हुआ मैं बड़े ज़ोर से सिफ़ारिश करता हूं कि प्रत्येक वैश्य बड़े छोटे को यज्ञो-पवीत लेना चाहिये।

दूसरा संस्कार जिसकी ओर आप का ध्यान दिलाना उचित प्रतीत होता है गर्भाधान है गर्भाधान संस्कार पर यदि अमल होवे तो संसार स्वर्ग ही न बन जावे? यह हिन्दू जाति का गौरव है कि जिन के शास्त्रों की शिक्षा है कि विवाह हैवानी ख्वाहिश को पूरा करने या

T

विषय भोग के लिये नहीं है। बल्कि विवाहित पुरुष और स्त्री का संयोग या विषय केवल सन्तानोत्पत्ति के लिये होता है पुरुष की आयु पचीस वर्ष या कम से कम इक्कीस वर्ष से और स्त्री की आयु सोले वर्ष से कम न हो। और और जब स्त्री ऋतु गामिनि होवे तब यह संस्कार होता है इस विचार को मन में लाकर कि सन्तान जो उत्पन्न हो तो बल, बुद्धि, भक्ति, आदि गुणों से सम्पन्न हो, दीर्घ आयु वाली हो परिवार के नाम को प्रकाश करने वाली हो माता पिता को ही नहीं किन्तु सारे संसार को सुख पहुंचाने वाली हो। इस इच्छा की पूर्ती के निमित्त उपासना प्रार्थना अग्निहोत्रादि क्रियाये होती हैं कि जिन के द्वारा ईश्वर के आशीर्वाद का निश्चय होसके तब स्त्री और पुरूष का संयोग बड़े शुद्ध और पवित्र भावों के साथ होता है उसके पश्चात तीन साल तक कुछ वास्ता विषय भोग का नही रहता है। जब बच्चा पैदा होकर सवा दो वर्ष का हो जावे तब फिर यह संस्कार होता है। और दूसरी बार संस्कार के पश्चात् जब बच्चा उत्पन्न होवे तब तक पहला बच्चा इस योग्य हो जाता हैं कि उसको अपनी माता के दूध की आवश्यकता न रहे। जल्दी जल्दी बच्चे पैदा करने से उनको अपनी माता का दूध काफी समय तक न मिलने से वह कम जोर रहते हैं। इस प्रकार जितने बच्चे पैदा करने हों उतनी बार स्त्री पुरूष का संयोग होता है। शास्त्र कहते हैं कि गर्भाधान के अतिरिक्त जो पुरूष अपनी स्त्री के साथ संगत करता है उसको उतना ही पाप होता है कि जितना अन्य स्त्री के

साध संगत करने से होता है और इस संस्कार पर दृढ़ रहने वाले पुरुष और स्त्री गृहस्थी ब्रह्मचारी कहलाते हैं यह गृहस्थी और उन की सन्तान किस प्रकार के बलवान आदि होंगी इसका बिचार आप खुद कर लीजिये।

यह है मित्रों आप की हिन्दू जाति के धर्म ग्रंथों की शिक्षा का गौरव! और किसी धर्म में ऐसी शिक्षा नहीं है। परन्तु जितना इस जाति की धर्म शिक्षाओं का गौरव है उतना ही दुर्भाग्य से हमारा उन महा उत्तम शिक्षाओं पर अमल कम है। यह सच है कि एक समय हमारे देश में ऐसी आज्ञा थी कि जब हमारे बुजुर्गों ने यह उचित समझा था कि लड़कियों के विवाह छोटी उमर में कर दिये जावें। उसी समय में शायद यह श्लोक बनाया गया था अर्थात:—

अष्ट वर्षा भवेत गौरी नव वर्षा च रोहिणी।
दश वर्षा भवेत कन्या तत् ऊर्ध्वं रजस्वला॥

जिस की रू से आठ वर्ष से दस वर्ष तक की उमर में लड़की का विवाह न कर देना महा पाप क़रार दिया गया था। कारण यह था कि मुसलमानों का ज़माना था और उन के उस वक्त के कानून के बमूजिब विवाहित स्त्री को तो कोइ कुछ नहीं कह सकता था परन्तु कुमारी लड़की को यदि कोई पकड़ कर मुसलमान बना लेता था और उस से शादी कर लेता था तो वह अमल सरकारी कानून के ख़िलाफ़ नहीं समझा जाता था। परिणाम इस का प्रायः यह होता था कि मुसलमान लोग लड़कियों को जबर

T

दस्ती पकड़ कर उन से शादी कर लेते थे। इस कारण छोटी उमर में लड़कियों की शादी कर देना उस वक्त निहायत ज़रूरी था। परन्तु तब भी शादी के बाद दुरागमन बहुत देर पीछे हुआ करता था। नौ दस वर्ष की उम्र में शादी होने से सात वर्ष बाद मुकलावा होता था तो उस में हिन्दू धर्म की असली शिक्षा पर चलने या गर्भाधान संस्कार के शास्त्रोक्त रीति से होने का अवसर पैदा हो जाता था अब ईश्वर की कृपा से ज़माना और है एक ऐसी गवर्नमेंट का राज्य है कि किसी को अपनी लड़की वगैरः की बाबत किसी प्रकार का भय नहीं है। अब जरूरत नहीं है कि छोटी लड़कियों का विवाह किया जावे। परन्तु यदि कोई कहे कि विवाह जल्दी हो जावे और मुकलावा पीछे हो जावे तो कुछ हर्ज नहीं इस विषय में विचार के योग्य यह बात है कि छोटी उम्र में शादी करने से सम्भव है कि लड़का या लड़की मुकलावे से पहले मृत्यु को प्राप्त हो जावें तो विवाह में जो खर्च वगैरः हुआ वह बरबाद गया। और प्रथम तो बार २ लड़के का विवाह भी होना कठिन है परंतु लड़की बेचारी तो उम्रभर के लिये बिधवा होजाती है। सनातन धर्मियों में यदि बिधवा का पुनर विवाह बर्जित है तो चाहिये कि ऐसा यत्न करें कि जिससे जहां तक होसके विधवायें कम होवें। छोटी उम्र की शादी करना विधवा बनाने की एक फैक्टरी जारी करने समान है। आर्य्य समाज के जो प्रधान लीडर हैं उन की मति यह है कि यदि अक्षत योनि बिधवा हो कि जो ब्रह्मचारिणी रहना कठिन समझे तो

उसकी इच्छा हो तो उसका पुनर्विवाह होजाना चाहिये वह हरगिज़ नहीं कहते कि बाल बच्चों वाली विधवा स्त्रियों का पुनर्विवाह होवे। और न वह कहते हैं कि जो कोई अक्षत योनि विधवा ब्रह्मचारिणी रहना चाहे उसको भी जबरदस्ती दूसरा विवाह करदो। वह कहते हैं कि इस बातको विचार करके जैसा कि बहुत बार देखा जाता है कि बेचारी विधवायें अन्य जाति वालों के साथ चली जाती हैं और कितने प्रकार के अनुचित काम कर बैठती हैं कि जिनको सुनकर रोंगटे खड़े होते हैं। उन अक्षत योनि विधवाओं का विवाह होजाना ही उचित है कि जो ब्रह्मचारिणी रहना पसंद न करें। परंतु सनातन धर्मी भाई कि जिनके बीच में सरकारी मर्दुम शुमारी के अनुसार बहुत विधवायें एक एक साल की उम्र तक की हैं। और पांच साल और सात साल की उम्र को विधवाओं का तो कहना ही क्या है विधवाओं के पुनर विवाह से तो विरोध करते हैं और कारख़ाना या फ़ैक्टरी विधवा बनाने की उन्होंने जारी कर रक्खी है। उन को चाहिये कि छोटी उम्र में शादी न करें। इस के अतिरिक्त यह बात है कि विवाह के पश्चात् मुकलावा भी जल्दी हो ही जाता है। और उस से जो जो हानि पहुंचती है उस को सब ही जानते हैं। ग्यारा ग्यारा और बारा बारा वर्ष की उम्र में बेचारी लड़कियों के बच्चे पैदा हो जाते हैं। भला क्या तो वह बच्चे होंगे और क्या उन बच्चों वाली लड़कियों की तन्दुरुस्ती होगी-हज़ारों हज़ार स्त्रियां इस तरह बेचारी पहिले या दूसरे जापे में समाप्त जाती हैं

और जो जीती रहती हैं उनका जीना मरने से भी ज़ियादा दुःख दाई होता है।

बड़ी उम्र में शादी करने का एक फ़ायदा यह है कि जो रुपया छोटी उम्र में शादी करने में खर्च होता है उस का कई साल का सूद बच जाता है।

इस विषय में मैं एक बात की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं—वह यह है कि विवाह से पहले लड़की का रजस्वला हो जाना माता पिता आदि के लिये बड़े पाप का कारण समझा जाता है-विवाह होकर गौने से पहले यदि वह रजस्वला हो जावे तो माता पिता को कोई पाप नहीं है। परन्तु विवाह से पहले उसका रजस्वला होना माता पिता के लिये महा पाप है यह एक ऐसी बात है कि जो मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार उसी मुसलमानी ज़माने में जारी हुई थी और अब इस पर अमल होना सर्वथा अनुचित है इसके सिवाय आज कल के ज़माने में कन्यायें जल्दी अर्थात् छोटी उम्र में रजस्वला होने लगीं हैं। इसका कारण यह है कि उनके रूबरू सीठने फ़ोहश २ गीत, रण्डियों आदि का नाच वग़ैरह ऐसे २ काम होते हैं कि उन के भाव बिगड़ने से वह समय जल्दी आ जाता है कि जब वह रजस्वला हो जाती हैं-इन बातों से परहेज़ रक्खा जावे और उन के भाव पवित्र रहें तो वह हरगिज़ जल्दी रजस्वला नहीं होंगी।

एक और बात जो ध्यान देने योग्य है यह है कि लोग कहते हैं कि शास्त्रों की शिक्षा पर चलना अर्थात

T

गर्भाधान के समय में ही स्त्री पुरूष का संयोग होवे और कभी न हो यह महा कठिन बात है और विशेष कर आज कल के ज़माने में इस पर चलना बहुत मुशकिल है। प्रायः यह भी कहा जाता है कि इस ज़माने में ज्यादा उम्र तक बिदून शादी के रहना कठिन है। यह बात ठीक है। पहिले ज़माने में जबकि लोगों के हृदयों के भाव पवित्र हुआ करते थे, और उन के असर से वायु और आकाश आदि में सुन्दर असर आया करते थे, जबकि यज्ञ हवन आदि के कारण अन्न, जल, वायु, आदि में सतो-गुण भरा हुआ करता था कि जिस से शुद्ध भाव मनुष्यों के अन्दर उत्पन्न होते थे, तब भी विश्वामित्र जैसे महा पुरुष तक को काम देव ने विजय कर लिया। और आज कल के ज़माने की हालत तो बहुत ही और सब प्रकार से विपरीत है। नौ जवान लोगोंके लिये वास्तव में काम देव को विजय करना बहुत कठिन काम है। और हमारी पूरी हमदर्दी उन के साथ है। परन्तु इस विषय में मेरी प्रार्थना यह है कि जबकि वीर्य्यकी रक्षा करनो है तो इस में विवाह होने की दशामें बहुत ज्यादा कठिनता है। जिस पुरुष का विवाह नहीं हुआ हो वह यदि किसी जगह सो रहा हो और आधी पिछलीरात में जाग पड़े तो प्रथम तो स्त्री पास न होने के कारण अपवित्र भाव ही मन में पैदा नहीं होते हैं। दूसरे वह ऐसा समय होता है कि न वह स्त्री को बुला सकता है और न कहीं जासकता है। और उसके लिये किसी अपवित्र इच्छा को पूरा करना उस समय प्रायः कठिन ही होता है परन्तु विवाहित पुरुष को

सुगमता होने के कारण उसका बचाव कठिन है। विवाहित लोगों की दशा अग्नि और घी के इकट्ठा होने के समान होती है, और उस के साथ प्रायः स्त्री की ओर से प्रेरणा होना उस कठिनता को और भी अधिक बना देता है। इसलिये शादी न होने की दशा में वीर्य्य की रक्षा में अधिक सुगमता होती है।

विवाहित पुरुषों को मैं यह इशारा किया करता हूं कि स्त्री को शास्त्रों में लक्ष्मी और माता के समान लिखा है। विवाह में फेरे होने के पश्चात् वर के पिता से लक्ष्मी आये की दक्षिणा और इनाम मांगा जाया करता है। उधर स्त्री के लिये पति विष्णु भगवान के समान समझा जाता है, और शास्त्रों की आज्ञा अनुसार स्त्री और पुरुष के बीच में यदि गर्भाधान संस्कार होवे अर्थात् सृष्टि को बढ़ाने और सुन्दर सन्तान द्वारा सहायता पहुंचाने के लिये संयोग होवे तो वह एक बड़ा धर्म का काम समझा जाता है। और यदि केवल नफ़सानी ख्वाहिश पूरा करने के लिये संग होवे तो पुरुष का लक्ष्मी माता के साथ और स्त्री का विष्णु भगवान के साथ विषय करने के समान महा पाप गिना जाने के योग्य है। लड़कों और लड़कियों को वीर्य्य की रक्षा में उन को गुरुकुल, ऋषिकुल, आचार्यकुल, और अच्छे २ बोर्डिंग हाउस आदि में रखने से भी बहुत सहायता मिलती है और ऋषिकुल आदि बहुत सारे हमारे देश में क़ायम होने चाहियें कि जिन में कुमार और कन्यायें और बाल

बिधवायें रह सकें। जो कोई इस में सहायता करता है वह बहुत ही अच्छा काम करता है।

और माता पिताओं को कम से कम अपने बच्चों की खातिर से इस गर्भाधान संस्कार और गृहस्थी ब्रह्मचारीपन पर अमल करना चाहिये कि जिस से उनके लिये एक नमूना क़ायम हो। ऐसे ही उन को व्यायाम, संध्या, आदि करके बच्चों के आगे नमूना क़ायम करना चाहिये।

परन्तु मैं आप ही कहता हूं कि यह सारी बातें कहने के लिये तो ठीक हैं, किन्तु कामदेव जैसे महा बलवान् शत्रु को वश में करने के लिये बातों से काम नहीं चलेगा। हज़ार बातें आप लोगों को समझायें। वह आप के समझाने पर वीर्य्य के नाश की बड़ी हानि को और वीर्य्य की रक्षा के बड़े और महा लाभ को समझ भी लेवें, और मन में संकल्प भी वीर्य की रक्षा का करलें। परन्तु जब कि विश्वामित्र जैसे महापुरुषों को उस यज्ञ आदि के ज़माने में कामदेव ने दबा लिया, तो आज कल के निर्बल आत्मा वाले लोगों के संकल्पों से क्या बनता है? पांडव गीता में दुर्योधन का यह वाक्य साधारण मनुष्यों की और विशेष कर कलिकाल के दुर्बलात्माओं की दशा को ठीक ही प्रकट करता है अर्थात्—

जानामि धर्मं नचमे प्रवृति
जानाम्य धर्मं नचमे निवृति
केनापि देवे न हृदिस्थितेन
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि॥१॥

जिस का तात्पर्य्य यह है कि मैं धर्म को जानता हूं-परन्तु मुझ से धर्म होता नहीं। और मैं अधर्म को भी जानता हूं - परन्तु मैं उससे बच नहीं सक्ता। कोई ऐसा देव (या शक्ति) मेरे हृदय के अन्दर बैठा हुआ है कि जैसा कुछ वह मुझ से कराता है वैसा ही मैं करता हूं। इस बात को बिचार कर घबराहट ज़रूर पैदा होती है और काम आदि जैसे बलवान शत्रुओं को बिजय करने के लिये आत्मिक बल और उस दुर्योधन वाले देव से अधिक बल वाली शक्ति की आवश्यकता अधिकतर प्रतीत होती है।

और मेरे सिर में तो वही एक बात छोटी संध्या की घुसी हुई है जिस को शरणागत बल्कि अंगागत धर्म कहना चाहिये। कि जिस को बर्ताव में लाकर मैं आप भी लाभ उठा रहा हूं। विश्वासी पुरुष को जब कभी अपने बच्चों या बजुर्गों या बिरादरी या जाति या और किसी की ओर से कोई दुःख या सोच होती है तो वह तुरन्त, फ़ौरन से पहले उस दुःख विनाशक, सब सुखदायक ,शांति के भंडार, अपने पिता की शरण में या उस के चरणों में बल्कि गोद में "सब आप के भक्त बन जायें"—कहता हुआ पहुंच जाता है। कि जहां उस को मुक्ति के और परिपूर्णता के भंडार अपने ऊपर को न्योछावर होते हुए प्रतीत होते हैं। और अपनी और अपने सब प्यारों की बाबत उस को "माशुचः" और "प्रसन्नोभव" की आकाश वाणी हृदय आकाश से आती हुई प्रतीत होती है। उस के ख़याल ऊंचे हो जाते हैं और जब उस को इस प्रकार के ऊंचे दर्जे के आनन्द का स्वाद आने लगता

है तो वह संसारिक बिषय भोग आदि को तुच्छ समझने लगता है। वह संसार की समस्त घटनाओं के अन्दर से दुःख, सुख, पाप, पुण्य, जीवन, मृत्यु, आदि प्रत्येक घटना के अन्दर से अपने और अपने सब प्यारों के लिये अनंत मंगलकारी असर निकलते हुए देखता है। और आनन्द होता हुआ आत्मिकबल और शारीरिक और मानसिक बल को भी लाभ करता है कि जो काम क्रोध आदि को बिजय करने में उस के सहायक होते हैं।

मैं इतना और निवेदन करने की आज्ञा चाहता हूं कि जैसा कि मुझ को एक संस्कृत के बड़े विद्वान ने मेरे प्रश्न करने पर बतलाया था, ब्रह्मचर्य्य शब्द के अर्थ वीर्य्य की रक्षा के नहीं हैं। वीर्य्य की रक्षा और और अनेक बातें तो ब्रह्मचर्य्य के फल हैं। ब्रह्मचर्य्य के अर्थ हैं ब्रह्म में बिचरना ब्रह्म नाम परमात्मा का है और ब्रह्म नाम विद्या और वेद का भी है। विद्या में या वेद में बिचरना या परमात्मा में बिचरना या परमात्मा में अपना जीवन व्यतीत करना वास्तव में एक ही बात है विद्या और वेद हम को ईश्वर का ज्ञान देते हैं अर्थात हम को बतलाते हैं कि वह हमारा पिता है। हर समय का हमारा साथी और रक्षक और सहायक है। हम हर समय उसका वही मधुर "माशुचः" और "प्रसन्नो भव" और "ओं भूः" का शब्द सुनने के अधिकारी हैं। यही है ईश्वर में विचरना। या यों कहिये कि छोटी सन्ध्या हम को ब्रह्म में विचरने वाला या ब्रह्मचारी बना देती है, कि जिस से हमारे अन्दर आनन्द द्वारा आत्मिक बल और अनेक गुण आजाते हैं। हमारे खयालात ऊंचे होते

जाते हैं। और वीर्य्य की रक्षा, सत्य भाषण, प्रेम, निष्काम कर्म करने का उत्साह, हिम्मत, हौसला आदि अनेक बातें हमारे अन्दर पैदा होती जाती हैं। इसी से विवाह करने से मनुष्य गृहस्थी ब्रह्मचारी बन जाते हैं, और ब्रह्म में बिचरने रूपी ब्रह्मचर्य्य का पालन करने का प्रत्येक मनुष्य चारों आश्रमों में अधिकारी है। यदि हम बच्चों को इस प्रकार ब्रह्मचारी बना देवें तो उन के वीर्य्य की रक्षा आदि सारी ही बातें हो जावेंगी, और वह बड़े होकर अपने कुल के चिराग़ नहीं किन्तु संसार में सूर्य्य की नाई चमकेंगे।

वैश्य सभा सर्व हित कारणी

मित्र गण! केवल एक ही विनय और है और मेरी बकवास ख़तम समझिये। हम पर अक्सर इलजाम लगाया जाया करता है कि हम केवल अपनी जाति की भलाई के लिये यत्न करते हैं जबकि हम को सब की भलाई के लिये यत्न करना चाहिये परन्तु यह इलजाम हम पर बेजा है। सारी रिपोर्टों को खोल कर पढ़ लीजिये और इस ऐड्रेस पर भी ध्यान देकर देख लीजिये और आप कह सकेंगे कि हमारी कान्फ्रेंस वैश्य कानफ्रेन्स होती हुई भी सारे ससार का भला चाहती है। हम अपनी कानफ्रेन्स द्वारा सब का ही भला करने की इच्छा रखते हैं और केवल वैश्य जाति के उपकार से हम कदापि सन्तुष्ट नहीं हो सकते हैं और ईश्वर की कृपा से सब का ही उपकार होने का हम को निश्चय है। हम सब के भले में अपना भला समझते हैं।

उपसंहार

परन्तु मित्र गण ! मैं इस ऐड्रेस को समाप्त नहीं कर सक्ता हूं बिना एक अत्यन्त हर्षदायक कर्तव्य को किये और वह यह है कि मैं अंत में आप की इस कृपा के लिये भी हार्दिक धन्यवाद दूं कि आप इतने समय तक ऐसी शांति के साथ मेरी वक्तृता को सुनते रहे । मुझ से जियादा कोई इस बात को नहीं जानता है कि यह वक्तृता त्रुटियों से भरी हुई है और ऐसी नहीं है कि जो ऐसी कान्फ्रेंस में क़दर की निगाह से देखी जा सके। और कारण इस का यही है कि जैसाकि मैंने सभा पति चुने जाने से पहिले कई बार कहा था कि मैं विद्वान नहीं हूं। परन्तु इतनी त्रुटियां होते हुए भी आप की कृपा और प्रेम पर विचार करने पर मुझको पूर्ण निश्चय है कि जैसी कुछ सेवा मुझ से बनी है वह प्रसन्नता के ही साथ देखी जावेगी, और जिस प्रकार अपनें प्यारों के साधारण शब्दों को सुन कर भी मनुष्य प्रायः बड़े प्रसन्न हुआ करते हैं, और उन की अपेक्षा अन्य पुरुषों के बड़े २ विद्वत्ता पूर्ण व्याख्यान भी उन को उतने प्यारे नहीं प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार आपने मेरे शब्दों को प्रसन्नता के साथ सुना होगा, और मेरी त्रुटियों पर निगाह न डालते हुए जो कुछ भी थोड़ा बहुत इस वक्तृता में गुण पाया होगा, उस से आनन्दित हुए होंगे। साथ ही मुझ को यह भी पूर्ण प्रकार से निश्चय है कि ईश्वर के आशीर्वाद का बल और उस के अनेक गुण मेरे प्रत्येक शब्द में निस्सन्देह और अवश्यमेव भरे हुए थे और हैं।

T

और यह व्याख्यान यदि ललित और मनोहर न भी प्रतीत होवे तो भी फलों के लिहाज़ से किसी अच्छे से अच्छे व्याख्यान से कम नहीं साबित होगा। ईश्वर जानता है कि मैंने प्रेम और सेवा के भावों के साथ और शुद्ध संकल्पों के साथ इस को तैयार किया है। और यही कारण मेरे इस विश्वास का है कि उस के फल महान् महान् होंगे। मेरा पूर्ण विश्वास है कि कलकत्ते की कान्फरेंस, यह भारतवर्ष के शिरोमणि नगर की कानफरेंस इस नगर के नाम के क़ाबिल कानफरेंस साबित होगी। यह बीसवीं कानफरेंस जो वैश्य जाति के असली मेम्बरों अर्थात् हमारे कलकत्ते के मारवाड़ी भाइयों की कृपा से यहां कलकत्ते में हुई है हमारे प्रियवर भाइयों के प्रेम की शान के लायक साबित होवेगी। प्यारे भाइयो! यह पूर्णतया निश्चय है कि यह कानफरेंस ऐसी साबित होवेगी कि इसके कारण आप के आगामी उद्योग ज़ियादा ही ज़ियादा सफल होवेंगे। प्यारे कलकत्ते के निवासियो! तुम को बधाईयां! बधाईयां! तुम्हारे परिश्रमों से जो यह कानफरेंस हुई है, यह एक यादगार कानफरेंस होगी। इस लिये जितना कुछ धन्यवाद तुम को दिया जावे थोड़ा है। तुम्हारी इस कानफरेंस के कारण आईन्दा की कानफरेंसें सब एक से एक बढ़ चढ़ कर होवेंगी। खोल दीजिये विचार और विश्वास के कानों को, और सुन लीजिये! हृदय आकाश से एक आकाश वाणी आ रही है। कि जो बड़े मधुर, अमृतमय और स्पष्ट शब्दों में कह रही है कि "हां प्यारे बच्चो! तुम्हारे सारे मनोरथ सिद्ध होंगे। तुम्हारे उद्योगों का फल निश्चय अनंत, अनंत, अनंत होगा!!!"

T

वह आकाशवाणी कह रही है कि "प्यारे बच्चो ! कैसे हो सकता है कि मेरा आशीर्वाद केवल तुम्हारे सभापति के प्रत्येक शब्द पर ही नहीं, किन्तु प्रत्येक वक्ता के प्रत्येक शब्द पर न हो। हां प्यारो तुम्हारे उद्योगों का फल निश्चय अनन्त २ होगा। तुम्हारे सारे मनोरथ सिद्ध होंगे। "साधुवः और प्रसन्नो भव" वह आकाशवाणी यह भी कहती हुई प्रतीत होती है, कि "प्यारे बच्चो सच पूछो तो मैं तुम्हारा कृतयज्ञ हुं कि तुमने मेरी सारी सन्तान के महा उपकार के लिये यह उद्योग किया है। और इस के लिये तुम मेरी और सारी सृष्टी की पूर्ण कृतज्ञता के पात्र निश्चय और अवश्यमेव हो"।

प्यारो ! यदि कोई ईश्वर है तो वह पिता ज़रूर है। और यदि एक बार उसको पिता मान लिया जावे तो मेरा ऊपर का कथन कदापि अत्युक्ति नहीं कहा जा सकता। और मेरा तो विश्वास है कि ईश्वर एक वास्तविक पदार्थ है। परन्तु कल्पित भी हो तब भी ऊपर का निवेदन ठीक ही है, और इस लिये बधाईयां ! बधाईयां !! हज़ार हज़ार, लाख लाख बधाईयां आपको और मुझको, ऐसी आकाश बाणी सुनने के अधिकारी होने के लिये और कानफरेन्स की ऐसी बड़ी सफलता के लिये।

ओं— शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥